मूल्य : रु. ६/-
अंक : १७८
अक्टूबर २००७

दीपावली का पर्व
प्रकाश की, ज्ञान की
उपासना का पर्व है।
आपके हृदयमंदिर में
प्रभुकृपा का दीया
सदैव जगमगाता रहे।

शुभ दीपावली...
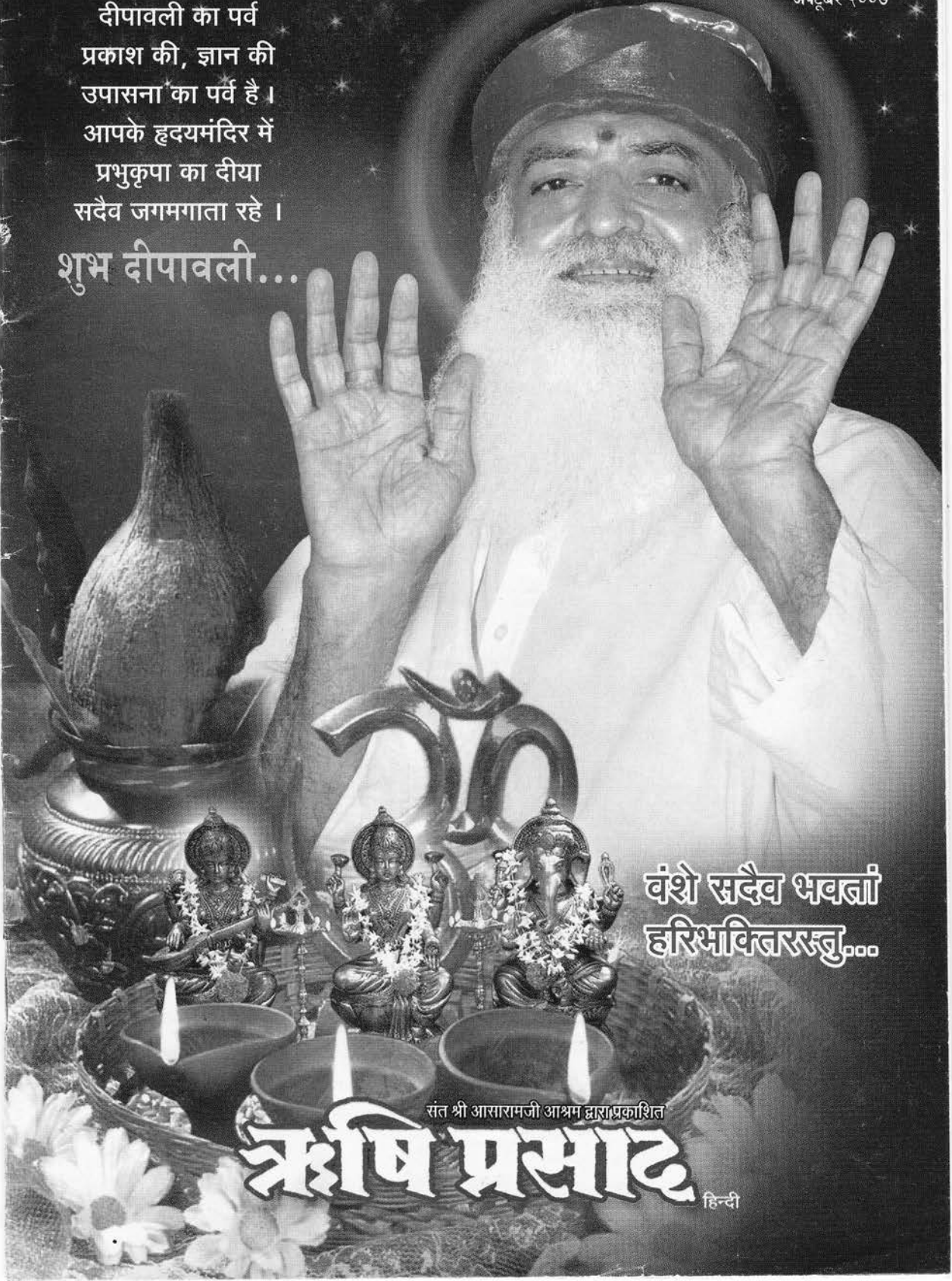
वंशे सदैव भवतां
हरिभक्तिरस्तु...

संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

ऋषि प्रसाद

हिन्दी

गोण्डा (उ.प्र.) के बाढ़पीड़ितों में राहत सामग्री का वितरण।

उदगीर जि. लातूर (महा.) के गरीबों में फल-वितरण।

गुलबर्गा (कर्नाटक) के अस्पताल में फल-वितरण।

ग्वालियर (म.प्र.) के अस्पताल में फल-वितरण।
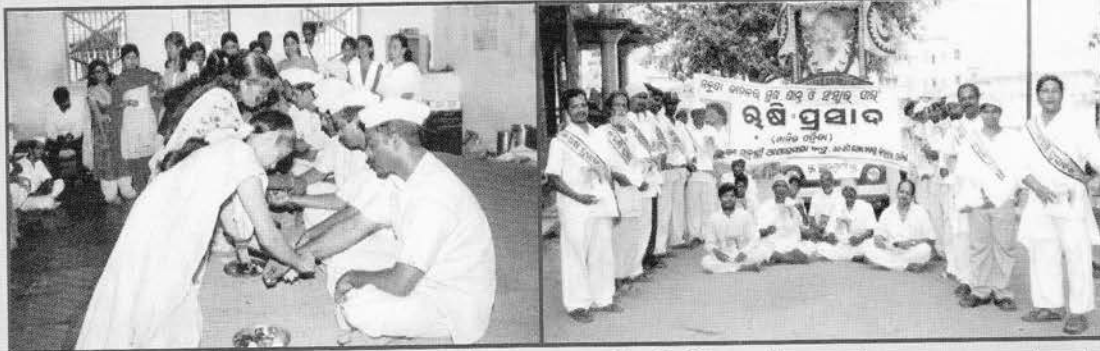
अलीबाग जि. रायगड (महा.) कारागार में पूज्य बापूजी की शिष्याओं द्वारा 'रक्षाबन्धन कार्यक्रम' एवं जीवन में आध्यात्मिकता का प्रकाश फैलानेवाली पत्रिका 'ऋषि प्रसाद' को जन-जन तक पहुँचाने का अभियान चलाते हुए केसरापल्ली जि. गंजाम (उड़ीसा) के पुण्यात्मा सेवाधारी।
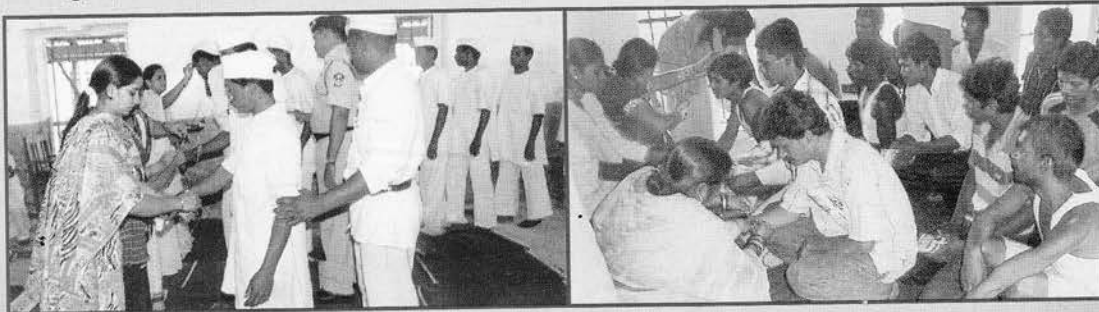
यवतमाल (महा.) तथा सिहोर (म.प्र.) के बन्दीगृहों में कैदियों को राखी बाँधकर पूज्य बापूजी के अमृतवचनों पर आधारित जीवनोद्धारक सत्साहित्य प्रदान करती साधिका बहनें।

ऋषि प्रसाद
मासिक पत्रिका

वर्ष : १८	अंक : १७८
अक्टूबर २००७	मूल्य : रु. ६-००
आश्विन-कार्तिक	वि.सं.२०६४

सदस्यता शुल्क

भारत में

(१) वार्षिक : रु. ६०/-
(२) द्विवार्षिक : रु. १००/-
(३) पंचवार्षिक : रु. २००/-
(४) आजीवन : रु. ५००/-

नेपाल, भूटान व पाकिस्तान में

(१) वार्षिक : रु. ८०/-
(२) द्विवार्षिक : रु. १५०/-
(३) पंचवार्षिक : रु. ३००/-
(४) आजीवन : रु. ७५०/-

अन्य देशों में

(१) वार्षिक : US $ 20
(२) द्विवार्षिक : US $ 40
(३) पंचवार्षिक : US $ 80
(४) आजीवन : US $ 200

ऋषि प्रसाद (अंग्रेजी)	वार्षिक	पंचवार्षिक
भारत में	१२०	५००
नेपाल, भूटान व पाक में	१७५	७५०
अन्य देशों में	US $ 20	US $ 80

कार्यालय : 'ऋषि प्रसाद', श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, अमदावाद-५.
ऋषि प्रसाद से संबंधित कार्य के लिए फोन नं. : (०७९) ३९८७७७१४, ६६११५७१४.
अन्य जानकारी हेतु फोन : (०७९) २७५०५०१०-११, ३९८७७७८८, ६६११५५००.
e-mail : ashramindia@ashram.org
: ashramindia@gmail.com
web-site : www.ashram.org

स्वामी : संत श्री आसारामजी आश्रम
प्रकाशक और मुद्रक : श्री कौशिकभाई वाणी
प्रकाशन स्थल : श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, अमदावाद-५.
मुद्रण स्थल : विनय प्रिंटिंग प्रेस, ''सुदर्शन'', मिठाखली अंडरब्रीज के पास, नवरंगपुरा, अहमदाबाद - ३८०००९. गुजरात
सम्पादक : श्री कौशिकभाई वाणी
सहसम्पादक : डॉ. प्रे. खो. मकवाणा
श्रीनिवास

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्र-व्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक अथवा सदस्यता क्रमांक अवश्य लिखें। पता-परिवर्तन हेतु एक माह पूर्व सूचित करें।

Subject to Ahmedabad Jurisdiction

अनुक्रम

(१) संपादकीय — २
* गीता : एक सर्वमान्य धर्मशास्त्र

(२) सत्संग-महिमा — ४

(३) विवेक जागृति — ५
* अँधेरा तब तक है जब तक...

(४) योगवासिष्ठ प्रसंग — ७
* 'मैं ऐसे स्वर्ग-भोग की इच्छा नहीं करता'

(५) साधना प्रकाश — ९
* स्वीकृति और सावधानी - दो महामंत्र

(६) पर्व मांगल्य — ११
* भारतवासी वित्त के नहीं महालक्ष्मी के पुजारी हैं

(७) चित्त के दोषों को दूर करने की उपासना — १३

(८) जीवन सौरभ — १४
* धन्य हैं सत्पथ दर्शानेवाले वे संत !

(९) नारियों का कितना महान योगदान ! — १६

(१०) विचार मंथन — १६
* तीन प्रतिबंध

(११) गुरु संदेश — १८
* संयोगजन्य सुख की आसक्ति मिटाओ

(१२) वेद अमृत — २१
* कलियुग के दुष्प्रभाव से कैसे पार हों ?

(१३) शास्त्र प्रसाद — २३
* देवन को देव तू...

(१४) भक्त चरित्र — २५
* महान भगवद्भक्त प्रह्लाद

(१५) सर्व नेत्ररोगनिवारक, मेधा व दृष्टि शक्तिवर्धक त्रिफला... — २७

(१६) शरीर स्वास्थ्य — २८
* शीतकाल में बलसंवर्धनार्थ : मालिश

(१७) भक्तों के अनुभव — ३०
* बायपास सर्जरी से छुटकारा

(१८) संस्था समाचार — ३०

(१९) राम का अस्तित्व न माननेवाला हलफनामा अपमानजनक — ३२

गीता : एक सर्वमान्य धर्मशास्त्र

३० अगस्त २००७ को इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने कहा कि 'भगवद्गीता' सभी धर्मों का निचोड़ है और इसने हमारे स्वतंत्रता संग्राम में भी प्रेरक की भूमिका निभायी है । इसलिए ऐसे ग्रंथ को राष्ट्रीय धर्मशास्त्र की मान्यता दी जानी चाहिए ।

इसके लिए हाईकोर्ट ने संविधान के अनुच्छेद ५१-ए (बी) व (एफ) का हवाला दिया, जिसमें राष्ट्रीय ध्वज, राष्ट्रगान, राष्ट्रीय पक्षी और राष्ट्रपुष्प का प्रविधान है । अदालत ने कहा कि हर नागरिक का कर्तव्य है कि वह 'भगवद्गीता' के आदर्शों पर अमल करे और धरोहरों की रक्षा करे। यह ग्रंथ किसी खास संप्रदाय का नहीं बल्कि सभी संप्रदायों की 'मार्गदर्शक शक्ति' और भारत का धर्मशास्त्र है। भारतीय संस्कृति के श्रेष्ठतम आध्यात्मिक ग्रंथ का, जिसे संपूर्ण विश्व में श्रेष्ठ ग्रंथ होने का सम्मान प्राप्त हो चुका है, भारत में राजनैतिक दृष्टि से सम्मानित होने का शायद प्रथम संकेत है । इसके लिए न्यायमूर्ति श्री एस. एन. श्रीवास्तव धन्यवाद के पात्र हैं । यदि हम विश्व के महान वैज्ञानिकों द्वारा प्रमाणित श्रेष्ठतम विज्ञान से भारत को लाभान्वित करने में संकोच नहीं करते, विश्व के तकनीकी विशेषज्ञों द्वारा प्रमाणित श्रेष्ठ टेक्नोलोजी से भारत को लाभान्वित करने में संकोच नहीं करते तो विश्व के महान तत्त्वचिंतकों एवं विद्वानों द्वारा प्रमाणित श्रेष्ठ ग्रंथ 'गीता' से भारत को विभूषित करने में क्यों हिचकिचाते हैं ?

उच्च न्यायालय के उक्त सुझाव के विरुद्ध प्रतिक्रिया व्यक्त करनेवालों ने सनातन धर्म व 'गीता' की सार्वभौम महिमा से अनभिज्ञ होने का परिचय दिया है, अपनी संकीर्णता और ओछी बुद्धि को ही उजागर किया है ।

स्वामी विज्ञानानंदजी ने कहा है : ''जिसे हम हिन्दू धर्म कहते हैं यह वास्तव में सनातन धर्म है क्योंकि यह सार्वभौम धर्म है, जो अन्य सभीको अपनेमें समाहित कर लेता है ।''

श्री लक्ष्मी विलास बिड़ला ने कहा है : ''हिन्दू धर्म केवल धर्म नहीं है, जैसे इसलाम या ईसाई धर्म है, यह सनातन धर्म या मानव धर्म है अर्थात् यह शाश्वत या हमेशा रहनेवाला धर्म है । इसमें सभी कुछ शामिल है । असल में यह एक जीवन-दर्शन है ।''

राजनेताओं ने सनातन धर्म को भी एक सम्प्रदाय के रूप में वर्गीकृत करके इस महान धर्म के उच्चतम लाभों से समाज को वंचित किया है। समस्त विश्व के धर्मों का अध्ययन करनेवाले विद्वानों ने मुक्तकंठ से सनातन धर्म की और इसके सत्शास्त्रों की प्रशंसा की है। फ्रांस के विद्वान रोमां रोलां ने कहा है : ''मैंने यूरोप और एशिया के सभी धर्मों का अध्ययन किया है परंतु मुझे उन

* **ऋतस्य पथ्या अनु ।** हे मानव ! तू सत्य के मार्गों का अनुसरण कर । (यजुर्वेद : ६.१२)
* **सुषदस्त्वम् ।** हे मनुष्य ! तू महापुरुषों का सत्संग कर । (यजुर्वेद : ११.४४)
* **उत्थाय बृहती भव ।** हे मानव ! तू आलस्य को छोड़कर महापुरुषार्थ युक्त हो । (यजुर्वेद : ११.६४)

सबमें हिन्दू धर्म ही सर्वश्रेष्ठ दिखायी देता है। मेरा विश्वास है कि इसके सामने एक दिन समस्त जगत को सिर झुकाना पड़ेगा।''

ऐसे सनातन धर्म को एक सम्प्रदाय के रूप में समझना भारी भूल है। सनातन धर्म के योगशास्त्र का लाभ समस्त विश्व के विभिन्न धर्मों के लोग ले सकते हैं, वेदों पर आधारित वैदिक गणित का लाभ विश्व के सभी धर्मों के लोग ले सकते हैं, ॐकार मंत्र का लाभ लेकर सभी धर्मों के लोग स्वास्थ्य-लाभ प्राप्त कर सकते हैं, 'श्रीमद् भगवद्गीता' जैसे ग्रंथ का मैनेजमेंट सिखानेवाली विदेशी संस्थाएँ और मनोचिकित्सक लाभ ले सकते हैं तो भारत के सभी धर्मों के लोग इस दिव्य शास्त्र का लाभ क्यों नहीं ले सकते ?

इसी बात को महात्मा गाँधीजी ने स्पष्ट शब्दों में व्यक्त किया है : ''मैं तो चाहता हूँ 'गीता' न केवल राष्ट्रीय शालाओं में ही बल्कि प्रत्येक शिक्षासंस्था में पढ़ायी जाय। एक हिन्दू बालक या बालिका के लिए 'गीता' का न जानना शर्म की बात होनी चाहिए। यह सच है कि 'गीता' विश्वधर्म की एक पुस्तक है।''

पारसी विद्वानों ने भी 'गीता' को विश्वधर्म की पुस्तक माना है :

''मानवमात्र के लिए जब एक अखिल विश्वधर्म की प्राण-प्रतिष्ठा होने लगेगी, तब हमें एकमात्र 'गीता' का ही सहारा रह जायेगा क्योंकि यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि विश्वधर्म के मौलिक प्राण-तत्त्वों का जितना सुन्दर समावेश 'गीता' में है उतना किसी भी अन्य धर्म के किसी भी धर्मग्रंथ में नहीं है।'' - **प्रो. फिरोज कावसजी दावर**

बुद्धिमान मुसलिम विद्वानों ने भी 'गीता' को मानवमात्र के लिए उपयोगी बताया है :

''गीता-वक्ता भगवान श्रीकृष्ण का उपदेश केवल आर्यजाति के लिए नहीं है बल्कि समस्त भूत-प्राणियों के लिए है।''

– **डॉ. मुहम्मद हाफिज सैय्यद**

'श्रीमद् भगवद्गीता' की महिमा समस्त विश्व के विद्वानों ने गायी है। पश्चिमी जगत में 'गीता' की आध्यात्मिक सुन्दरता और तत्त्वज्ञानीय गहराई की ओर मुड़नेवालों में प्रथम थे कार्लाईल, वोल्ट व्हिटमेन, थोरो और ईमर्सन। 'गीता' का फ्रेन्च भाषा में अनुवाद करनेवाले बर्नोफ ने लिखा है : ''मनुष्य के हाथों इससे अधिक महान ग्रंथ कभी भी नहीं रचा गया।''

सर चार्ल्स विल्किन्स द्वारा लिखित 'गीता' के प्रथम अंग्रेजी संस्करण की प्रस्तावना में भारत के प्रथम गवर्नर जनरल वारेन हेस्टिंग्स ने अठारहवीं शताब्दी का अंत होते-होते घोषित किया : ''भारतीय तत्त्वज्ञान के लेखक तब भी स्मरण में रहेंगे जब ब्रिटिश राजसत्ता के अस्तित्व का अंत हो चुका होगा तथा संपत्ति व सत्ता द्वारा जो स्रोत उन्होंने प्राप्त किये, वे कालगति में विस्मृत हो चुके होंगे।''

तबसे पश्चिमी जगत के अनेक दार्शनिकों एवं कवियों ने 'गीता' का स्तुतिगान किया है :

''पूर्वी जगत की सभी स्मरणीय वस्तुओं में 'भगवद्गीता' से श्रेष्ठ कोई भी वस्तु नहीं है। 'गीता' के साथ तुलना करने पर जगत का आधुनिक समस्त ज्ञान मुझे तुच्छ लगता है। मैं नित्य प्रातःकाल अपने हृदय और बुद्धि को गीतारूपी पवित्र जल में स्नान करवाता हूँ।''

– **थोरो**

सिर को धूप से बचाओ, मन को पाप से बचाओ। – **पूज्य बापूजी**

आयुर्यज्ञेन कल्पताम्।

हे मनुष्यो ! अपनी आयु को यज्ञ (ईश्वर) के आज्ञापालन से समर्थ बनाओ। **(यजुर्वेद : ९.२१)**

''गीता ईश्वरों के भी ईश्वर परम महेश्वर का दिव्य संगीत है। कोई मनुष्य किसी भी धर्म को माननेवाला हो, उसे इस ग्रंथ से प्रगाढ़ ईश्वरीय भाव मिले बिना नहीं रह सकता।'' **- जॉर्ज सिडनी अरंडेल**

''गीता केवल हिन्दुओं की ही नहीं अपितु संसार की सभी जातियों की धर्मपुस्तक है। प्रत्येक मनुष्य को चाहिए कि वह इस अमर ग्रंथ को ध्यानपूर्वक एवं पक्षपातरहित होकर पढ़े, चाहे वह किसी धर्म को और किसी धर्मगुरु को मानता हो। 'गीता' को यदि दिव्य ज्ञान की खान कहें तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी।''

- श्री कैखुशरू जे. दस्तूर

''जगद्गुरु श्रीकृष्ण ने 'भगवद्गीता' के रूप में जगत को अनुपम देन दी है। ज्ञान, भक्ति, कर्म - ये शाश्वत आदर्श एक-दूसरे को साथ लिये हुए चलते हैं। इनमें प्रत्येक अन्य दोनों के लिए आवश्यक है।'' **- ईसाई धर्मोपदेशक रेवरंड आर्थर**

इस प्रकार संपूर्ण विश्व के विद्वानों एवं तत्त्वचिंतकों द्वारा जिस 'गीता' ग्रंथ को उत्कृष्ट ग्रंथ घोषित किया गया है और जिस ग्रंथ का लाभ सभी धर्म के लोगों ने लिया है तथा ले रहे हैं, उसे भारत का राष्ट्रीय धर्मग्रंथ बनाया जाय तो यह भारत का सौभाग्य है। इससे 'गीता' की महिमा नहीं बढ़ेगी अपितु विश्व के विद्वानों की दृष्टि में भारतीय राजनेताओं की बुद्धिमत्ता सिद्ध होगी। इससे केवल भारत का ही नहीं सम्पूर्ण विश्व का कल्याण होगा।

सभी सनातनधर्मप्रेमियों को इलाहाबाद उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति श्री एस. एन. श्रीवास्तव को पत्र आदि द्वारा साधुवाद देना चाहिए। ❐

सत्संग-महिमा

२८-२९ अगस्त २००७ को गोधरा (गुज.) में पूज्यश्री के श्रीमुख से निःसृत अमृतवाणी के कुछ अंश :

बड़े-से-बड़ी तपस्या क्या है, बड़े-से-बड़ा सुख कहाँ मिलता है, बड़े-से-बड़ा ज्ञान कहाँ से मिलता है, बड़े-से-बड़ा योग कहाँ होता है और बिना मेहनत के ये सब चीजें कहाँ सहज सुलभ होती हैं ?

बड़े-में-बड़ी तपस्या है सत्संग। बड़े-में-बड़ा ज्ञान का खजाना मिलता है सत्संग में। बड़े-से-बड़े सुख के द्वार खुलते हैं सत्संग से और बड़े-से-बड़ी उपलब्धि सत्संग है।

एक घड़ी आधी घड़ी, आधी में पुनि आध।
तुलसी संगत साध की, हरे कोटि अपराध॥

करोड़ों पाप, अपराध और दुःखों को हरनेवाला सत्संग है। बड़ा भारी योग, बड़ा भारी तप, बड़ा भारी धन, बड़ी वाहवाही, बड़ा भारी सुख सत्संग के आगे ये सब बौने हो जाते हैं। सत्संग से बढ़कर कोई तपस्या नहीं। सत्संग से जितना ज्ञान, ध्यान, पुण्य और कल्याण होता है वैसा किसी तपस्या से हमने आज तक देखा-सुना नहीं। हिरण्यकशिपु ने साठ हजार वर्ष तप किया। हिरणपुर का तो लाभ हुआ लेकिन अंत में ईश्वर की प्रीति नहीं मिली, ज्ञान नहीं मिला। ईश्वरभक्ति करनेवाले को ही सताने लगा। तप करने से रावण को सोने की लंका तो मिली लेकिन विभीषण को सत्संग से जो मिला वह रावण को सोने की लंका से नहीं मिला।

सत्संग से करोड़ों पाप नष्ट होते हैं इसीलिए सत्संग घोर तपस्या से भी ज्यादा है। तीव्र तितिक्षा से भी सत्संग का पुण्य ज्यादा है। तीव्र तप से भी सत्संग का पुण्य-प्रभाव ज्यादा है। दुनिया भर की पूरी संपदा मिल जाय पर सत्संग और गुरुमंत्र नहीं मिला तो अहंकार व विषय-विकारों में पड़ेगा। वह अभागा है। संपदा शराब, कबाब, चिंता, भय और नीच योनियों में ले जायेगी। अगर संपदा है और सत्संग एवं दीक्षा भी है तो फिर सत्कर्म, दान, पुण्य तथा भगवान तक ले जायेगी। ❐

अँधेरा तब तक है जब तक...

- पूज्य बापूजी

मनुष्य इस संसार के भ्रम में खोया है। जो है उसका उसे पता नहीं और जो तीनों कालों में नहीं है उसकी आसक्ति में फँस गया है । जो शरीर पहले नहीं था, बाद में नहीं रहेगा, अभी भी नहीं की तरफ जा रहा है उसीमें 'मैं' बुद्धि और वस्तुओं में 'मेरे' पने की बुद्धि यह अविद्या है। अविद्या माने जो विद्यमान नहीं है उसे विद्यमान जैसा दिखाये। इस अविद्या से ही अस्मिता अर्थात् देह का अहंकार पैदा हो जाता है और इसीसे राग-द्वेष पैदा होता है। राग-द्वेष से चित्त मलिन होता है और इसीसे अभिनिवेश (मृत्यु के भय से होनेवाला क्लेश) पैदा होता है। अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश- इनको 'पंचक्लेश' बोलते हैं। सब दुःखों की जननी है अविद्या। अन्य क्लेश अविद्या के ही बच्चे हैं। उत्पन्न होना, अस्तित्वमान होना, बढ़ना, रूपान्तर, क्षय और विनाश- ये षड्‌विकार अविद्या के कारण ही भासते हैं। इन षड्‌विकारों के साथ ऊर्मियाँ (गर्मी, सर्दी, भूख, प्यास, मोह और लोभ) आ जाती हैं और उन्हींमें झुलसता-झुलसता, जूझता-जूझता एक जन्म नहीं कई जन्मों से बेचारा जीव वही काम कर-करके मर रहा है। फिर करा, फिर मरा... करा-मरा, मरा-करा, करा-मरा... कितना कहें ?

गंगोत्री, जहाँ से गंगा का प्रवाह चलता है वहाँ से गंगा-सागर, जहाँ समुद्र में मिल जाता है वहाँ तक गंगा के पेट में जितने बालू के कण हो सकते हैं उनको तो शायद कोई गिन भी ले लेकिन यह जीव अविद्या के कारण कितने जन्म भोगकर आया, उसकी गिनती नहीं हो सकती। इन दुःखों से छूटने का एकमात्र उपाय है कि अविद्या को विद्या से हटाया जाय। जैसे प्यास को पानी से भगाया जाता है, भूख को रोटी से भगाया जाता है, ऐसे ही अंधकार को प्रकाश से भगाया जाता है । स्वामी रामतीर्थजी ने एक दृष्टान्त दिया कि किसी जंगल में एक पुरानी गुफा थी। बड़ी लम्बी-चौड़ी थी, अँधेरा-ही-अँधेरा था। बहुत प्राचीन थी और उसमें कई अजगर और हिंसक प्राणी भी पड़े रहते थे। जो आदमी वहाँ जाता कि यह काला-काला कौन है ? राक्षस है ? भूत है ? अन्दर कौन है जरा देखने जायें। ज्यों देखने जाता त्यों अँधेरी गुफा में उलझ जाता, बाहर नहीं निकल पाता; भूलभुलैया जैसा था। वहीं चट हो जाता और जो चट हो जाते वे प्रेत होकर वहीं भटकते तो दूसरे को भी पकड़ के वहीं रखते।

गाँववालों ने बहुत उपाय किये। कोई मँजीरा लाया, कोई तंबूरा लाया, कोई हरमोनियम लाया तो कोई तबला लाया।

''हे काले-काले देव ! तू राजी हो जा। हे काले-काले देव ! तू प्रसन्न हो जा।... हे काली माँ! काली कलकत्तेवाली ! तू अब

आ रोह तमसो ज्योतिः ।

हे प्रभो ! मुझे अंधकार (अज्ञान) से निकालकर ज्ञान की ओर ले चलो ! **(अथर्ववेद : ८.१.८)**

सर्वमेव शमस्तु नः । हमारे लिए सब कुछ कल्याणकारी हो। **(अथर्ववेद : १९.९.१४)**

किसीका भोग मत ले । गाँव के लोग तेरी शरण हैं ।'' सब भजन-कीर्तन करके प्रार्थना करने लगे लेकिन वह भूत गया नहीं, अँधेरा अथवा काली गयी नहीं । काली माता तो जगदम्बा हैं लेकिन वह काली माँ - अविद्या गयी नहीं । फिर किसीने माला लेकर जप किया कि अब जा । काली माँ नहीं गयी । कुछ ऐसे-ऐसे आये कि काली माँ की ऐसी-तैसी । समझती क्या है ? उठाये डंडे और गुफा के प्रांगण में खूब ठोके लेकिन वह काली माँ गयी नहीं । फिर किसीने पटाना चालू किया- भोग धरा, फिर भी काली माँ गयी नहीं । कोई गाली देता है, कोई पुचकारता है, कोई दंडवत् करता है, कोई माथा टेकता है, कोई माला घुमाता है तो कोई वहाँ अगरबत्ती करता है लेकिन वह घनी गुफा की अविद्या-काली माँ गयी नहीं ।

एक महात्मा आये, सारा हाल जाना । महात्मा ने कहा : ''पागल हुए हो । इस अविद्या को, इस काली माँ को भगाने के लिए मेरे पास है युक्ति ।''

मशाल जलायी, बोले : ''चलो मेरे साथ, लो मशालें, देखें काली माँ कहाँ रहती है ?''

वे गुफा में चलते गये-चलते गये । देखा तो काली माँ है ही नहीं और जो प्राणी थे वे भी पूँछ दबा के अपने-अपने रास्ते भाग गये । ऐसे ही अविद्या को ज्ञान की मशाल से देखो तो है ही नहीं और दूसरे उपायों से जाती नहीं ।

मेरे गुरुदेव सुनाया करते थे - एक बार अँधेरी रात भगवान ब्रह्माजी के पास गयी और बोली : ''प्रभु ! आपने मुझे जीवन दिया लेकिन वह सूरज जो है न, मेरे पीछे डंडा लेकर पड़ा है । रोज मुझे मार भगाता है । जब तक वह होता है तब तक मैं घुट मरती हूँ । वह जाता है तब कहीं मेरा जीवन फिर शुरू होता है । सच पूछो तो मैं बहुत परेशान हूँ । आप कृपा कीजिये ।''

ब्रह्माजी ने कहा : ''ठीक है, हम उसे बुलाते हैं ।''

बोले : ''नहीं-नहीं, मेरे होते-होते मत बुलाइयेगा । मैं चली जाऊँगी फिर बुलाइयेगा ।''

रात चली गयी । ब्रह्माजी ने सूर्यनारायण को बुलाया और पूछा कि ''भाई ! तू उस बेचारी माई के पीछे क्यों पड़ा है ?''

सूर्यनारायण ने कहा : ''ब्रह्मन् ! किसके पीछे ?''

''उस काली रात के पीछे तुम क्यों पड़े हो ?''

''ब्रह्मन् ! मुझे पता ही नहीं रात क्या होती है । उसको जरा बुलाओ । मैंने कब उसका पीछा किया ? कब मैंने उसका कुछ बिगाड़ा ? जरा बुलाओ !''

ब्रह्माजी ने कहा : ''वह तुम्हारे होते हुए नहीं आ सकती ।''

सूर्यनारायण बोले : ''फिर वह फरियाद करती है तो मैं सच्ची कैसे मानूँ ? मेरे सामने फरियाद करे ।''

ब्रह्माजी बोले : ''तुम्हारी गैरहाजिरी में ही उसका अस्तित्व है । तुम्हारी हाजिरी में उसका अस्तित्व ही नहीं है तो फरियाद कैसे ?''

जब आत्मज्ञान का प्रकाश नहीं होता है तभी अविद्यारूपी अँधेरा और उसकी फरियाद अस्मिता, राग, द्वेष, अभिनिवेशरूपी क्लेश, दुःख होते हैं । इसलिए आत्मज्ञान के द्वारा अविद्या मिटानी चाहिए । जिनको संसार में रहकर

मा नो द्विक्षत कश्चन । हमसे कोई भी द्वेष करनेवाला न हो । **(अथर्ववेद : १२.१.२४)**

शं मे अस्त्वभयं मे अस्तु ।

मुझे कल्याण की प्राप्ति हो और किसी प्रकार का भय न हो । **(अथर्ववेद : १९.९.१३)**

ईश्वरप्राप्ति करनी हो वे ८ घंटे सोने, खाने, नहाने-धोने आदि में लगायें और बाकी समय के दो भाग कर दें। एक भाग तो आजीविका के लिए और एक भाग मुक्ति के लिए। ८ घंटे कमाने में लगा दें, बाकी के ८ घंटों में २ घंटे जप, २ घंटे ध्यान, २ घंटे सत्शास्त्र-विचार और २ घंटे साधु-संग, उनके दैवी सेवाकार्य। जब शनैः-शनैः अविद्या मिटने लगे तो फिर पूरा समय अविद्या मिटाने के रास्ते चला आये।

जिनको ईश्वर की तरफ पूर्णरूप से, शीघ्र गति से लगना है वे तो ८ घंटे साधु-संग, उनके दैवी कार्य, साधुसेवा करें। आधी अविद्या तो इसीसे मिट जायेगी। बाकी आधी अविद्या को मिटाने के लिए शेष ८ घंटे जप, ध्यान, सत्शास्त्र-विचार आदि करें।

परब्रह्म परमात्मा के विषय में सुनो, उसीकी चर्चा करो, उसीका कथन करो। अपनेसे ऊँचे साधक हों या संत हों तो उनके चरणों में श्रद्धा से बैठकर सुनो। अपनी बराबरी के हैं तो उस परब्रह्म परमात्मा के विषय में बातचीत करो। अपनेसे छोटे हैं ज्ञान-ध्यान में तो उनके आगे वर्णन करो। नहीं तो अकेले में उस परमेश्वर तत्त्व का चिंतन करके शांत होते जाओ, श्वासोच्छ्वास को देखो।

अविद्या ऐसी कोई काली बला नहीं है। जो अविद्यमान को सत्य दिखा दे उसको बोलते हैं अविद्या और जो विद्यमान का पता दे उसे कहते हैं ब्रह्मविद्या। जो सदा विद्यमान सत्स्वरूप आत्मा है उसके लिए तत्परता पैदा कर दो बस! जो हो-हो के बदलता है, उसका चिंतन, आसक्ति हटाओ। □

'मैं ऐसे स्वर्ग-भोग की इच्छा नहीं करता'

राजा अरिष्टनेमि गन्धमादन पर्वत पर कठिन तपस्या कर रहा है, यह जानकर देवराज इन्द्र ने अपने दूत को आज्ञा दी :

''हे दूत! तुम अप्सराओं और विविध बाजों से सुशोभित; गन्धर्व, सिद्ध, किन्नर आदि से विभूषित विमान को एवं ताल आदि से सज्जित सेना को लेकर अनेक प्रकार के वृक्षों से शोभित गन्धमादन पर्वत पर जाओ और राजा अरिष्टनेमि को विमान पर बैठाकर स्वर्गसुख भोगने के लिए अमरावती पुरी में ले आओ।''

सम्पूर्ण सामग्रियों से युक्त विमान को लेकर दूत उक्त पर्वत पर गया। वहाँ पहुँच के राजा के आश्रम में जाकर दूत ने उनको देवराज इन्द्र की सब आज्ञा कह सुनायी। दूत के वचनों को सुनकर संदेह में पड़े राजा ने कहा :

''हे दूत! स्वर्ग में कौन-कौन-से गुण और दोष हैं ? आप उनका वर्णन कीजिये। मैं उन्हें जानकर जैसी इच्छा होगी वैसा करूँगा।''

देवदूत ने कहा : ''राजन्! पुण्य की सामग्री के अनुसार मनुष्य स्वर्ग में उत्तम फल भोगता है।

मधुमतीं वाचमुदेयम्। मैं मीठी वाणी बोलूँ। (अथर्ववेद : १६.२.२)

कृते योनौ वपतेह बीजम्।

हे मनुष्यो! कर्मयोनि इस शरीररूपी खेत में पुण्यरूपी बीज बोओ। (यजुर्वेद : १२.६८)

उत्कृष्ट पुण्य से उत्कृष्ट स्वर्ग मिलता है, मध्यम पुण्य से मध्यम स्वर्ग मिलता है एवं कनिष्ठ पुण्य से तदनुरूप कनिष्ठ ही फलभोग मिलता है। इसमें हेर-फेर नहीं होता।

महाशय ! जिन्हें उत्तम स्वर्ग प्राप्त नहीं है, उनको उत्तम स्वर्गवालों की उत्कृष्टता असह्य प्रतीत होती है। समान स्वर्गवाले एक-दूसरे के साथ ईर्ष्या, स्पर्धा, विद्वेष आदि करते हैं और उत्तम स्वर्गवाले अपनी अपेक्षा हीन स्वर्गवालों की हीनता अर्थात् अल्प सुख देखकर सन्तोष करते हैं। जब तक पुण्यक्षय नहीं होता, तब तक स्वर्गवासी इस प्रकार उत्तम, मध्यम और अधम सुख का अनुभव करते कालयापन करते हैं। तदनन्तर पुण्यों के क्षीण होने पर इसी मनुष्य-लोक में आकर जन्म ग्रहण करते हैं।

महाराज ! स्वर्ग में ये ही गुण और दोष विद्यमान हैं।''

स्वर्ग के गुण-दोषों को सुनकर परम विवेकी अरिष्टनेमि बोले : ''देवदूत ! मैं ऐसे स्वर्ग-भोग की इच्छा नहीं करता। हे देवदूत ! आप इस विमान को लेकर देवराज इन्द्र के पास वापस चले जाइये, आपको नमस्कार है।''

देवदूत ने इन्द्र को वह सारा वृत्तांत कह सुनाया। राजा अरिष्टनेमि की स्वर्ग के प्रति विरक्ति देखकर इन्द्र को बड़ा आश्चर्य हुआ।

इन्द्र ने प्रसन्न होकर मधुर वाणी में कहा :

''हे दूत ! तुम फिर वहाँ जाओ और उस विरक्त राजा को ब्रह्मज्ञानप्राप्ति के लिए तत्त्वज्ञ महर्षि वाल्मीकिजी के आश्रम में ले जाओ और महर्षि वाल्मीकि से मेरा यह संदेशा कहो कि 'महर्षिजी ! इस विरक्त, विनीत और स्वर्ग के प्रति निःस्पृह राजा को तत्त्वज्ञान का उपदेश दीजिये।' तत्त्वज्ञान के उपदेश से संसार-दुःख से पीड़ित वह क्रमशः मुक्ति को प्राप्त होगा।''

दूत ने इन्द्र के संदेश के साथ राजा को महर्षि वाल्मीकिजी के समीप उपस्थित किया और राजा ने महर्षि से मोक्ष के साधन के विषय में जिज्ञासा की। तब वाल्मीकिजी ने राजा से प्रीतिपूर्वक देश, धन, पुत्र, तप आदि के प्रश्न द्वारा आरोग्य-कुशल पूछा।

राजा ने कहा : ''भगवन् ! आप सब धर्मों के तत्त्वों को जानते हैं और जितने ज्ञातव्य विषय हैं उन सबके आप ज्ञाता हैं। मैं आपके दर्शन से कृतार्थ हूँ, यही मेरी कुशल है।

भगवन् ! इस समय मैं जिज्ञासु और संसार-दुःख से कातर हूँ। आप मुझे तत्त्व का उपदेश दीजिये, जिससे मैं संसार-बंधनरूप पीड़ा से मुक्त हो जाऊँ।''

महर्षि वाल्मीकिजी ने कहा : ''राजन् ! मोक्ष के उपायभूत साधनों के विषय में आपने मुझसे जो जिज्ञासा की है, उसके लिए बत्तीस हजार श्लोकों का 'योगवासिष्ठ' नामक 'महारामायण' आपके निकट कहता हूँ। यह अखण्डतत्त्व-प्रतिपादक है। इसे यत्नपूर्वक सुनकर एवं हृदय में धारण करके आप जीवन्मुक्त हो जायेंगे।''

('श्री योगवासिष्ठ महारामायण' के 'वैराग्य प्रकरण' के प्रथम सर्ग से संक्षिप्त)

महर्षि वसिष्ठजी और भगवान श्रीरामचन्द्रजी का संवादस्वरूप यह रामायण मुक्ति का अद्वितीय उपाय और अत्यन्त कल्याणकारी है।

(आश्रम द्वारा यह सद्ग्रंथ चार खण्डों में प्रकाशित किया गया है।) ❑

मा जारिषुः सूरयः सुव्रतासः।

अपने व्रत-नियमों में दृढ़ ज्ञानी साधक कभी जीर्ण (क्षीण एवं हीन) नहीं होते। **(ऋग्वेद : १.१२५.७)**

माभि मंस्थाः। हे मानव ! अभिमान मत कर। **(यजुर्वेद : १३.४१)**

स्वीकृति और सावधानी - दो महामंत्र

(पूज्य बापूजी के सत्संग से)

साधन करने में श्रम की आवश्यकता नहीं है, शक्ति की आवश्यकता नहीं है; केवल स्वीकृति की आवश्यकता है, सावधानी की आवश्यकता है। हमको स्वीकृति देनी है : 'जो तेरी मर्जी, वह मेरी मर्जी।' ईश्वर और गुरु के अनुभव में सहमत हो जाने से बहुत श्रम बच जाता है । अभी नहीं तो हजारों वर्ष के बाद भी सहमत होना पड़ता है तो अभी क्यों न हो जायें ?

जो लोग स्वीकृति नहीं देते वे लोग साधन कर-करके थक जाते हैं फिर भी जीवन में बदलाहट नहीं आती, श्रम कर-करके थक जाते हैं तो भी रस नहीं आता। क्योंकि साधन-भजन करते हैं श्रेष्ठ का और चाहते हैं तुच्छ पर वह परमात्मा हमको तुच्छ देकर फँसाना नहीं चाहता लेकिन हम इस बात की स्वीकृति नहीं देते। हम अपना मनमाना चाहते हैं कि ऐसा हो। सब तो अपने मन का होगा नहीं। अगर सबके मन का होने लग जाय तो संसार की स्थिति बिगड़ जायेगी, डाँवाँडोल हो जायेगी।

ईश्वर की दृष्टि में अपनी दृष्टि मिला दें, बस ! **जो थारी मर्जी वो मारी मर्जी।** ईश्वर को जैसा जगत दिखता है और 'स्व' दिखता है ऐसा तू अपनेको, 'स्व' को देख और जगत को देख, स्वीकृति दे दे हो गया काम !

तो साधना का मतलब है तुम्हारी स्वीकृति देने की तैयारी। ज्यों स्वीकृति दी त्यों ईश्वर और गुरु के अनुभव में एक होने में आसानी हो जायेगी।

दूसरी बात है सावधानी की। हम अगर सावधानी का बर्ताव करें तो हमारा साधन सहज में होगा। सावधानी क्या करनी है कि अहंकार पोसना नहीं है, राग-द्वेष पोसना नहीं है, शत्रु-मित्र के भाव को पोसना नहीं है, इनको क्षीण करना है। अगर यह सावधानी नहीं रही तो मंदिर में जाने के बाद भी यह ऐसा हैं, उसकी नाक ऐसी है, उसका गाल ऐसा है, उसका मुँह ऐसा है... चलता रहेगा।

असावधानी और अस्वीकृति का ही फल है राग-द्वेष। इन दो मूर्खताओं से व्यक्ति में, कुटुम्ब में, समाज में, राज्य में, देश में, विश्व में अशांति की आग लगी है।

असावधानी से राग-द्वेष बढ़ता है। मनुष्य-मनुष्य का शत्रु हो जाता है, गुरुभाई-गुरुभाई के शत्रु हो जाते हैं। कैसी बेवकूफी है ! एक पिता के पुत्र आपस में शत्रु हो जाते हैं। कितनी नालायकी ! यह उसकी टाँग खींचेगा, वह इसकी टाँग खींचेगा। स्वीकृति नहीं है, ईश्वर की हाँ-में-हाँ नहीं है, ईश्वर के साथ प्रीति नहीं है, इसीलिए राग-द्वेष से पिंड छूटता नहीं है।

सब घट मेरा साँइयाँ खाली घट ना कोय।

शत्रु के अंदर भी मेरा साँइयाँ है - शत्रु के प्रति भी ऐसा गहरा चिंतन करोगे तो शत्रु की शक्ति

प्राणो यज्ञेन कल्पताम्।

हे मनुष्यो ! अपनी जीवनशक्ति को धर्मयुक्त व्यवहार और विद्याभ्यास से समर्थ बनाओ।

(यजुर्वेद : ९.२१)

तुम्हें दबायेगी नहीं, तुम्हारी निष्ठा शत्रु के हृदय को बदल देगी। केवल सावधानी रखो कि तुम्हारा चित्त दूषित न हो। तुम्हारा चित्त राग-द्वेष, अभिनिवेश में न गिरे। इतनी सावधानी और जैसा ईश्वर व गुरु कहते हैं, उनकी हाँ-में-हाँ - स्वीकृति दे दो। गुरु कहते हैं कि सुख और दुःख के भोगी मत बनो। सुख के चाहक मत बनो और दुःख से पलायनवादी मत होओ। दुःख आये तो उसको भी देखो, किस बात से आया ? क्यों आया ? आता है, कितने दिन टिकता है ? देखो। सावधान होकर दुःख के द्रष्टा बनोगे तो दुःख तुम्हें दुःख का भोक्ता नहीं बनायेगा। ऐसे ही सावधान होकर सुख को भी देखो कि आखिर कब तक ? आकर्षित हुए, वस्तु मिली; आखिर क्या ?

सुख में आसक्ति तुम्हें दबा देती है और दुःख का भय भी तुम्हें दबा देता है। इससे अंतःकरण मलिन होता है। राग-द्वेष से भी अंतःकरण मलिन होता है। अपने अधिकार, अपनी विशेषता का अहंकार करने से भी अंतःकरण में परिच्छिन्नता और मलिनता आती है।

तुम्हारे पास कितनी शक्ति है उसको पता है। उसके अनुसार ही तुम करो। कोई जरूरी नहीं कि तुम्हारे पास है २५ वॉट का बल्ब और तुम २०० वॉट का जला के दिखाओ। तुम्हारे पास १० वॉट का है तो वह भी काफी है। तुम्हारे पास जो शक्ति है, जो योग्यता है उसके अनुसार ही साधन करो पर सावधानी रखो कि तुम्हारी शक्ति व योग्यता और जगह बिखर तो नहीं रही है ? फालतू बातों में, फालतू खाने में, व्यर्थ सोचने में, फालतू आकर्षणों में तुम्हारी जीवनशक्ति का ह्रास तो नहीं हो रहा, इसकी सावधानी !

'स्वीकृति और सावधानी' - ये दो बातें ऐसी हैं कि इनको महामंत्र कह दें तो कोई आपत्ति नहीं। सुबह उठो कि आज 'स्वीकृति और सावधानी' की साधना करूँगा बस। हर एक घंटे में फिर याद करो- स्वीकृति और सावधानी ! पाँच-दस दिन ऐसा करके देखो। तुमको पाँच महीने संसार की मजदूरी करने से जो नहीं मिला अथवा मनमाना भजन करने से जो ऊँचाई, जो शक्ति, प्रसन्नता नहीं मिली वही पाँच-दस दिन में इन दो बातों से मिल जायेगी। ❐

सदा दिवाली संत की, आठों प्रहर आनंद।
अकलमता कोई उपजा, गिने इन्द्र को रंक ॥

इन्द्र को नृत्य और गान से सुख खोजना पड़ता है, वह रंक-सुख है और अपने आत्मा में तृप्त रहनेवाला आत्मारामी... अकलमता उपजा। अपने-आपमें पूर्ण सुखी ! ऐसा कौन अकलमता उपजा, खोजो। वह अकलमता आप भी पा लो।

संत तुलसीदासजी कहते हैं :

तीन टूक कौपीन की भाजी बिना लूण।
तुलसी हृदय रघुवीर बसे तो इन्द्र बापडो कूण ॥

- पूज्यश्री

***

उदगादयमादित्यो विश्वेन सहसा सह।
द्विषन्तं मह्यं रन्धयन्मो अहं द्विषते रधम् ॥

'सब मनुष्यों के लिए उचित है कि अनन्त बलयुक्त परमेश्वर से प्रेरित होकर जैसे सूर्य उदित होकर तेज को प्राप्त होता है, वैसे ही सब मनुष्य बल को प्राप्त होकर विकास करें; न किसीसे द्वेष करें और न किसीको मारें।'

(ऋग्वेद : १.५०.१३)

देवं सवितारं गच्छ स्वाहा।

हे मनुष्य ! तू वेदवाणी तथा सत्संग के द्वारा सर्वप्रकाशक, आनंदप्रद और सकल जगदुत्पादक परमेश्वर को जान। (यजुर्वेद : ६.२१)

भारतवासी वित्त के नहीं महालक्ष्मी के पुजारी हैं

(दीपावली : ९ नवम्बर २००७)

अज्ञानरूपी अंधकार पर ज्ञानरूपी प्रकाश की विजय का संदेश देता है जगमगाते दीपों का उत्सव 'दीपावली' । भारतीय संस्कृति का यह प्रकाशमय पर्व प्रेरणा देता है कि आप सभी अपने जीवन को ज्ञानरूपी प्रकाश से जगमगायें ।

दीपावली के दिनों में साफ-सफाई की जाती है, नयी वस्तु लायी जाती है, मिठाई खायी-खिलायी जाती है, दीये जलाये जाते हैं तथा लक्ष्मीजी का पूजन किया जाता है ।

पहला काम है - साफ-सफाई करना। जैसे दीपावली के दिनों में घर में, दुकान में, कल-कारखानों में सफाई की आवश्यकता पड़ती है, ऐसे ही जो अपने अन्तःकरण की शुद्धि की आवश्यकता समझते हैं वे धनभागी अपने चित्त को गुरुज्ञान के प्रकाश से आलोकित रखते हैं, ताकि उनके चित्त में न राग चिपके, न द्वेष चिपके, न भय चिपके, न चिंता चिपके। किसी भी विकार की गन्दगी अपने चित्त में न रहे - यह हो गयी आन्तर सफाई । राग-द्वेष से सटेंगे, जाति-पंथ से सटेंगे तो अन्तःकरण मलिन हो जायेगा। अन्तःकरण को जीवन्मुक्ति के विलक्षण आनंद और आत्मिक प्रकाश से सम्पन्न करना हो तो 'यह मिले तो सुखी हो जाऊँ, यहाँ जाऊँ तो सुखी हो जाऊँ..'- यह भ्रमणा निकालनी पड़ेगी। जो जहाँ है वहाँ अपनेमें ठीक-से गोता मारे तो ईश्वरप्राप्ति की ललक जगेगी। संसार के चिन्तन से संसारी सुख की ललक जगती है जिससे अन्तःकरण मलिन हो जाता है। व्यक्ति मिठाई खाने, बाँटने, पटाखे फोड़ने, हल्ला-गुल्ला करने, कपड़े पहनने में ही जीवन की ६०-७० दीपावलियाँ पूरी करके संसार से खाली हाथ चला जाता है। जबकि ईश्वर के चिन्तन से, श्रद्धा से, जप-ध्यान तथा निःस्वार्थ कर्मों से अन्तःकरण शुद्ध होता है, जिससे उसके सारे दुःखों का अंत हो जाता है।

दूसरा काम है- नयी चीज लाना । अपने चित्त में उस परमात्मा को पाने के लिए कोई दिव्य, पवित्र, आत्मसाक्षात्कार में सीधा साथ दे ऐसे व्रत-नियम डाल दें। जरा-जरा बात में, सुख के लालच में, दुःख के भय में फिसल पड़ते हैं। नहीं... जैसे गाँधीजी ने अपने जीवन में व्रत रख दिया था - सप्ताह में एक दिन न बोलने का व्रत, ब्रह्मचर्य का व्रत, सत्य का व्रत, प्रार्थना का व्रत... ऐसा ही कोई व्रत अपने जीवन में, अपने चित्त में रख दें जिस व्रत से अपने लक्ष्य की तरफ दृढ़ता से चल सकें और अपना ईश्वरीय अंश विकसित कर सकें।

मनुष्य अच्छा व्रत-नियम लेकर, अच्छी संगति, अच्छे विचार से इतना ऊँचा, इतनी

अर्थमिद्वा उ अर्थिनः ।

ऐश्वर्य-प्राप्ति का दृढ़ संकल्प करनेवाले निश्चय ही अपेक्षित ऐश्वर्य पाते हैं ।

(ऋग्वेद : १.१०५.२)

योग्यताओंवाला हो सकता है कि 'भगवान क्या हैं और मैं क्या हूँ ?' - इस ज्ञान को पाकर जीवन्मुक्त हो सकता है।

तीसरा काम- मीठा खाना और खिलाना। बाहर की मिठाई के साथ-साथ अन्तरात्मदेव के ध्यान की, वैदिक चिन्तन की, गुरुज्ञान की मधुरता की मिठास भी आवश्यक है। वैदिक चिन्तन का, गुरुज्ञान का अभाव ही सारे दुःखों की जड़ है।

सारे राष्ट्रों की, प्रांतों की, तहसीलों की, सारे व्यक्तियों की, समाजों की अधोगति का एक ही कारण है - अद्वैत ज्ञान का अभाव।

सबमें एक, एक में सब की भावना - **वासुदेवः सर्वम्...** यह अद्वैत ज्ञान ज्यों-ज्यों भूलते गये, त्यों-त्यों दुःखों में गरकाब होते गये।

सद्गुरुओं के ज्ञान की यह मिठाई तो सत्शिष्यों के लिए खास इनायत होती है, आरक्षित होती है, अमानत होती है।

चौथा काम- दीया जलाना होता है अर्थात् साक्षी भाव का, ज्ञान का दीया जलाना।

महात्मा बुद्ध कहते हैं : **अप्प दीपो भव।**

अपना दीया आप बनो। यह दीपावली का सत्संग संदेश देता है कि आप अपने प्रकाश में जीयो, अपनी सूझबूझ में जीयो, अपना हौसला बुलन्द रखो अर्थात् साक्षीभाव का, ज्ञान का दीया जलाओ।

'दुःख भी आया है तो जायेगा, सुख भी आया है तो जायेगा, शरीर भी आया है तो जायेगा लेकिन शरीर के पहले जो था, अभी जो है, बाद में जो रहेगा वह 'मैं' कौन हूँ ?' - इस प्रकार ज्ञान की जिज्ञासा करे तो ज्ञान का दीया जलेगा। चिंता की जगह, भय-दुःख की जगह ज्ञान का प्रकाश... 'यह हो गया, वह हो जायेगा, वह मर जायेगा...' करके डर-डर के क्यों मरें ? आत्मा-परमात्मा अमर है और शरीर मरनेवाला है। संसार दुःखालय है और परमात्मा आनंद-मधुरालय है। मधुरालय के हम सनातन सपूत हैं और दुःखालय का प्रतिनिधि यह शरीर है। शरीर को 'मैं' मानने का अज्ञान छोड़ते जायें और ज्ञान के प्रकाश में जीते जायें। दुःख और सुख में अपनेको डुबाने की गलती का अज्ञान छोड़ते जायें और परमात्म-प्रकाश में जीते जायें।

दीपावली की रात्रि को सरस्वतीजी और लक्ष्मीजी का पूजन किया जाता है। ज्ञानीजन केवल अखूट धन की प्राप्ति को लक्ष्मी नहीं वित्त मानते हैं। जो ऐश-आराम, मौज-मजा करा के रिबा-रिबाकर, घुट-घुट के मारे वह वित्त होता है। विदेशों में वित्त तो बहुत है लेकिन महालक्ष्मी नहीं है। भारतवासी वित्त के पुजारी नहीं, महालक्ष्मी के पुजारी हैं इसलिए नारायणानुरागा लक्ष्मी का पूजन करते हैं। लक्ष्मीजी जब भगवान के साथ चलती हैं तो गरुड़ पर चलती हैं और जब अकेले जाती हैं तो उल्लू पर सवार होकर जाती हैं। गरुड़जी का दर्शन शुभ सूचक है और उल्लू का दर्शन अशुभ सूचक। इसलिए जो सद्गुरु के बताये हुए मार्ग के अनुसार भगवत्प्राप्ति के लिए, भगवत्प्रीति के लिए जप-ध्यान, पूजा-पाठ, दान-पुण्य, अतिथि-सत्कार आदि सत्कर्म करते हैं उनके यहाँ लक्ष्मीजी अपने पतिदेव श्रीनारायण सहित पधारती हैं और भक्त का जीवन उत्तरोत्तर उन्नति की ओर अग्रसर करती हुई जीवन की शाम हो उसके पहले जीवनदाता से मुलाकात कराने का द्वार खोल

इयं ते यज्ञिया तनूः।

हे मनुष्य ! तेरा यह शरीर यज्ञीय है। तुझे यह शरीर परोपकार, सत्कर्म और प्रभु-प्राप्ति के लिए मिला है। **(यजुर्वेद : ४.१३)**

देती हैं परंतु जहाँ लक्ष्मीजी का पूजन, आवाहन ऐश-आराम के लिए किया जाता है वहाँ लक्ष्मीजी उल्लू पर बैठकर आती हैं, जिससे उनके आते ही बुद्धिभ्रम, मदांधता एवं प्रमाद का बोलबाला हो जाता है । मानवता, धर्म एवं संस्कृति की रक्षा के आवश्यक कार्यों को सामने देखते हुए भी उल्लू की भाँति ऐसे लोगों की आँख बन्द हो जाती है । शराब, कबाब, वेश्यागमन और मुकदमेबाजी जैसे अनुचित कर्मों में ही उनका समय, शक्ति और आयुष्य पूरा हो जाता है तथा वे हताश, निराश और अनाथ होकर काल के गाल में समा जाते हैं ।

वेदादि शास्त्रों ने भी नारायणानुरागा लक्ष्मी की प्रशंसा की है :

रमन्तां पुण्या लक्ष्मीर्याः पापीस्ता अनीनशम् ।

'पुण्या लक्ष्मी हमारे घर में रमण करे और जो पापी (लक्षण) हैं वे विनष्ट हो जायें ।'

(अथर्ववेद : ७.११५.४)

दीपावली की रात्रि को लक्ष्मीजी के साथ-साथ सरस्वतीजी का भी पूजन किया जाता है, जिससे लक्ष्मी के साथ आपको विद्या भी मिले । केवल पेट भरने की विद्या नहीं वरन् वह विद्या भी, जिससे आपके जीवन में मुक्ति के पुष्प महकें ।

सा विद्या या विमुक्तये । □

चित्त के दोषों को दूर करने की उपासना

(सत्संग से)

चिंता तथा व्यर्थ का चिंतन साधक की शक्ति क्षीण करते हैं । गोरखनाथजी ने एक सुन्दर मंत्र बताया है जिसकी सहायता से इनसे बचा जा सकता है ।

ॐ चित्तात्मिकां महाचित्तीं चित्तस्वरूपिणीं आराधयामि, चित्तजान् रोगान् शमय शमय ठं ठं ठं स्वाहा, ठं ठं ठं स्वाहा ।

'हे चित्तात्मिका महाचित्तीचित्तस्वरूपिणी ! मैं तेरी आराधना करता हूँ । जगत शक्तिदात्री भगवती ! मेरे चित्त के रोगों का तू शमन कर ।'

चित्त में तो दोष ही भरे हैं । किसीमें लोभ, किसीमें मोह, किसीमें शराब पीने का, किसीमें शेखी बघारने का दोष होता है । इसके जप से आद्यशक्ति चेतना चित्त के दोषों को दूर कर देती है, चित्त को निर्मल कर देती है । इसमें संख्या का कोई नियम नहीं है । जब तक निद्रा न आये तब तक इसका प्रयोग करें । निद्रा आने पर स्वतः, अपने-आप छूट ही जायेगा । सीधे लेटकर यह जप किया जाता है । रात को जप करके सोने से सुबह तुम स्वस्थ, निर्भय, प्रसन्न होकर उठोगे । □

सुन्दरता का पता प्रकाश से चलता है, धर्म की परीक्षा चरित्र से होती है, सज्जनता की परीक्षा व्यवहार से होती है, वीरता की परीक्षा संकट के समय होती है, कठिन समस्या उपस्थित होने पर बुद्धि की परीक्षा होती है और आपात्काल में धैर्य, धर्म, मित्र और पत्नी की परीक्षा होती है । जो सदा विवेक, धैर्य और साहस का साथ नहीं छोड़ते वे सभी परीक्षाओं में सफल हो जाते हैं ।

***

दुराचारी च दुरादृष्टिर्दुराऽऽवासी च दुर्जनः । यन्मैत्री क्रियते पुम्भिर्नरः शीघ्रं विनश्यति ॥

'जो मनुष्य दुराचारी, बुरी नजर रखनेवाले, बुरे स्थान पर निवास करनेवाले दुर्जन के साथ मित्रता करता है वह मनुष्य शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।' (चाणक्य नीति दर्पण : २.१९)

धन्य हैं सत्पथ दर्शानेवाले वे संत !

(ब्रह्मलीन स्वामी श्री लीलाशाहजी महाराज पुण्यतिथि : १९ नवम्बर)

भुक्... छुक्... भुक्... छुक्... आवाज करती रेलगाड़ी जंगल में से गुजर रही है । उसके एक डिब्बे में कितने ही नवयुवक, दो-चार व्यापारी, एक चिकित्सक और इन सबमें निराले लगते श्वेत वस्त्रधारी एक संत यात्रा कर रहे हैं । उन्होंने दो-चार लोगों को बीड़ी-सिगरेट पीते देखा तो तुरन्त उन्हें रोकते हुए कहा :

''भाइयो ! आपको शायद खराब लगेगा परंतु आपके कल्याण की एक बात मैं कहना चाहता हूँ । आप बुरा न मानें । आप ठाठ से धूम्रपान कर रहे हैं परंतु इससे होनेवाली हानि का आपको पता न होगा ।''

सादे वस्त्रों में प्रभावशाली व्यक्तित्ववाले उन महाराजश्री की आकर्षक आवाज सुनकर डिब्बे में बैठे सब लोगों का ध्यान उनकी ओर आकृष्ट हो गया । धूम्रपान करनेवाले सज्जनों ने बीड़ी-सिगरेट खिड़की से बाहर फेंक दी और ध्यानपूर्वक सुनने के लिए तत्पर हो गये । महाराजश्री ने सबकी ओर देखते हुए अमृतवाणी का झरना बहाया । विभिन्न चिकित्सकों की दृष्टि में धूम्रपान के अवगुण बताकर वे बोले :

''भाइयो ! इस शरीर से छूटकर जब परलोक में जायेंगे और यहाँ किये हुए कर्मों का भयंकर फल सामने आयेगा, तब आप डर जायेंगे । यहाँ के मनोरंजन, लीलाएँ और चतुराइयाँ, बीड़ी-सिगरेट के चस्के तथा अपवित्र कर्मों के फल आपको ही भोगने पड़ेंगे । टेढ़े रास्ते आपको ही देखने पड़ेंगे । ८४ लाख फेरों में आप ही जायेंगे और नीच योनियों में चीखेंगे, चिल्लायेंगे, दुःखी होंगे । उस समय कौन आपका सहायक होगा ? इसलिए अभी सोचिये और चेत जाइये । अपना ऐसा अमूल्य जन्म बरबाद न कीजिये ।''

उनकी बातें ध्यान से सुन रहे यात्रियों में से एक युवक ने प्रश्न किया :

''महाराजश्री ! कोई भी व्यसनी काल से बच नहीं सकता, तब क्या जो बीड़ी, तम्बाकू, दारू, भाँग, गाँजा, चरस नहीं पीते, वे सब बच जायेंगे ? व्यसनी मरनेवाले हैं तो निर्व्यसनी भी तो मरेंगे ही । काल से कौन बच सकता है ?''

महाराजश्री ने मंद हास्य से युवक के प्रश्न को सराहते हुए कहा :

''भाई ! काल से केवल वही बच सकता है जो प्रभु के नाम में लीन हो जाता है । ऐसे सत्पुरुषों के पास नामरूपी डंडा रहता है जिससे काल के दूत भी घबराते हैं । निर्व्यसनी-सत्संगी का भी शरीर तो छूटेगा लेकिन वे यमपुरी में नहीं जाते । सेवा, भक्ति व परमात्म-ज्ञान का सुख उन्हें अमर आत्मपद में पहुँचा देता है । आपको पता होगा कि संत कबीरजी कैसे नामरूपी डंडा लेकर यमदूतों के पीछे पड़े थे । ऐसे महापुरुष अन्य किसी पर

यात पथिभिर्देवयानैः ।

हे मनुष्यो ! सदा विद्वानों के मार्ग पर चलो, महापुरुषों के पदचिह्नों का अनुसरण करो ।

(यजुर्वेद : ९.१८)

दयादृष्टि करें तो वह भी काल की पीड़ा से छूट जाता है और जो पुरुष ऐसे महापुरुषों के उपदेशानुसार बरतता है, वह भी भयानक काल से आजाद हो जाता है। अशुद्ध, अधर्मी तम्बाकू, बीड़ी, सिगरेट आपको संतों के चरणों में ले जायेंगे ? कदापि नहीं। ऐसी अपवित्र, खराब वस्तुएँ तो आपको सत्य से बहुत दूर ले जायेंगी।

यह राक्षस जर्दा-तम्बाकू आपको और आपके शरीर को बरबाद कर रहा है। इसलिए अपनी आँखें खोलो तो आपको ही लाभ है। याद रखना, कभी भूलना नहीं - जब जूते खाने का समय आयेगा, तब आपको अकेले ही सहना होगा। अधिक क्या कहूँ ? आगे जैसी आपकी इच्छा हो वैसा करें।

बकरा हरी घास खाता है और बाद में कसाई की छुरी के नीचे आता है। देखना, कहीं आपका भी यही हाल न हो कि आप इस जगत के नाशवान पदार्थों में भूलकर, कामनाओं में फँसकर काल की छुरी के नीचे आ जायें। इसीलिए मेरी सलाह है कि अपना ऐसा अमूल्य मनुष्य-जन्म इन तुच्छ चीजों से मोहित होकर बरबाद न करें।''

ऐसा सुनकर जो युवक डिब्बे में बैठे थे, उनमें से एक ने कहा : ''महाराज ! मैं कान पकड़कर सौगंध खाता हूँ कि मैं फिर कभी तम्बाकू का उपयोग न करूँगा। आपका उपदेश सुनकर मेरे शरीर के रोंगटे खड़े हो गये हैं। अब कभी तम्बाकू का इस्तेमाल नहीं करूँगा।''

महाराजश्री ने कहा : ''बेटा ! मन चंचल है। यह पलट न जाय इसलिए अभी उठ और बीड़ी-सिगरेट जो कुछ भी तेरे पास हो, उसे तोड़कर फेंक दे। **शुभस्य शीघ्रम्।**''

युवक ने जेब से बीड़ी, सिगार, माचिस निकालकर फेंक दी। उसने भावपूर्वक महाराजश्री को प्रणाम किया। डिब्बे में बैठे अन्य कितने ही लोगों ने भी अपनी जेबें बीड़ी-सिगरेट से खाली करके महाराजश्री को प्रणाम करते हुए भविष्य में कभी धूम्रपान न करने की शपथ ली।

एक चिकित्सक ने भी भावभीने शब्दों में कहा : ''महाराज ! मैं आपका उपदेश सुनकर बहुत ही आनंदित हुआ हूँ। आज की यात्रा मुझे सदैव याद रहेगी। खूब धन्यवाद ! धन्यवाद !! धन्यवाद !!!''

रेलगाड़ी के छोटे-से डिब्बे में बैठे हुए, व्यसनमुक्ति से हलके हुए हृदयवाले कितने ही मानवों को ले भुक्... छुक्... भुक्... छुक्... करती रेलगाड़ी आगे बढ़ती रही।

ये श्वेत वस्त्रधारी संत थे परम पूज्य स्वामी श्री लीलाशाहजी महाराज। धन्यवाद है सत्पथ दर्शानेवाले उन संत महापुरुष को व धन्य हैं उनके पावन चरणों में पहुँचनेवाले भाग्यशाली जन ! ❑

तिलेषु तैलं दधनीव सर्पिरापः
स्रोतःस्वरणीषु चाग्निः।
एवमात्माऽऽत्मनि गृह्यतेऽसौ
सत्येनैनं तपसा योऽनुपश्यति॥

'जैसे तिलों में तेल, दही में घी, स्रोतों में जल तथा अरणियों में अग्नि छिपी रहती है और तिलों को पेरने से, दही को बिलोने से, स्रोतों को खोदने से तथा अरणियों को रगड़ने से प्रकट होते हैं, वैसे ही जीवात्मा में परमात्मा निहित हैं परंतु वे सत्य और तप की रगड़ लगाने से प्रकट होते हैं और तभी दिखायी देते हैं।' **(श्वेताश्वतर उपनिषद् : १.१५)**

अपेत वीत वि च सर्पत।

हे मनुष्यो ! अधर्म से पृथक् रहो और धर्म को विशेषरूप से प्राप्त होओ तथा धर्म में ही विशेषरूप से गमन करो। **(यजुर्वेद : १२.४५)**

नारियों का कितना महान योगदान !

- पूज्य बापूजी

मेरे गुरुजी की वृद्ध दादी माँ पढ़ी-लिखी नहीं थीं । सत्संग सुनकर उन्हीं विचारों में बस शांत हो जाती थीं । केवल सत्संग में सुनकर 'मैं आत्मा हूँ' यह पक्का कर लिया । मेरे गुरुजी भगवान लीलारामजी तब बालक थे । उनको गोद में लेकर वे बोलतीं : ''अरे लीलाराम ! बहुएँ और दूसरी माइयाँ मजाक उड़ाती हैं कि बूढ़ी 'खें-खें' कर रही है । मैं बूढ़ी नहीं हूँ और 'खें-खें' नहीं करती हूँ । यह तो शरीर करता है । मैं तो चैतन्य आत्मा हूँ और परमात्मा की सब लीला है । 'खें-खें' भी वही है, कहनेवाला भी वही और सुननेवाला भी वही है । सबमें वही मेरा लीला-लाल !''

उन्होंने बचपन में लीलारामजी में ऐसे संस्कार डाल दिये कि २० साल की उम्र में तो लीलारामजी साक्षात्कारी हो गये ! अनपढ़ वृद्ध दादी माँ का यह कितना सत्संग-प्रभाव कि आज करोड़ों-करोड़ों लोग फायदा ले रहे हैं !

मेरी माँ ने मुझे ध्यान करने हेतु उत्साहित किया और लीलारामजी की दादीजी ने उनको आत्मज्ञान के संस्कार दिये - इन दोनों महिलाओं का सहयोग आसाराम और लीलाशाहजी बापू के द्वारा आत्मज्ञान, आत्मसुख का कितना-कितना फैलाव कर रहा है, देख लो ! महिलाओं का, नारियों का कितना योगदान है नर-नारियों को नारायण-नारायणी रूप बनाने में ! □

तीन प्रतिबंध

- पूज्य बापूजी के सत्संग से

आत्मज्ञान की प्राप्ति में तीन प्रकार के विघ्न, प्रतिबंध आते हैं :

(१) भूत प्रतिबंध : आप भगवान के रास्ते तो चलना चाहते हैं लेकिन भूतकाल में जो भोग भोगे हैं, किसी व्यक्ति ने सुख दिया है, कोई अच्छी वस्तु है तो वह बार-बार याद आयेगी । अथवा किसीसे लड़ाई-झगड़े हुए हैं, किसीसे कर्जा लिया है, किसीको कर्जा दिया है उसकी याद आती है । साधना तो करनी है लेकिन इतना जरा निपटा लें । भगवान के ध्यान में बैठे तो अच्छी अथवा बुरी बात याद आयेगी । बुरी बात के प्रति द्वेष होने के कारण और अच्छी बात के प्रति राग होने के कारण वह मन में घुस जाती है । यह भूत प्रतिबंधक प्रारब्ध है । इससे चित्त की वृत्ति ब्रह्माकार नहीं होती, आत्मसाक्षात्कार में बड़ी अड़चन आती है । इसे अभ्यास एवं वैराग्य से हटाया जाता है ।

एक व्यक्ति घरबार छोड़कर संन्यासी हो गया । गुरु ने बताया कि गुफा में बैठकर इस प्रकार ध्यान कर । दस दिन के बाद गुरु गुफा में गये, पूछा : ''क्या हालचाल है ?''

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् ।

सबको उत्तम मार्ग से ले चलनेवाले परमेश्वर ! मोक्षरूपी धन की प्राप्ति के लिए हमें शम-दम आदि से युक्त योगमार्ग पर चलाइये । **(यजुर्वेद : ५.३६)**

''गुरुजी ! मैं भगवान का ध्यान करने बैठता हूँ तो मुझे नीली-नीली भैंस दिखती है । घर में नयी-नयी लाये थे । मैं उसको चारा खिलाता था तो मेरी ओर देखती थी । उसके प्रति मेरा बड़ा स्नेह था ।''

गुरु ने देखा कि इसको भैंस में राग है । यह भूत प्रतिबंध है । गुरु युक्तिवाले थे, बोले : ''तू भैंस का ही ध्यान कर ।''

भैंस का ध्यान तो जल्दी सिद्ध हो गया । भैंस में उसकी एकाग्रता हो गयी । फिर समझाया कि भैंस में जो आत्मा है वही तुम्हारा भी आत्मा है । ऐसा करके गुरु उसको आत्मज्ञान की ओर ले आये । यह था भूत प्रतिबंध ।

(२) वर्तमान प्रतिबंध : विषयों में आसक्ति, बुद्धि की मंदता, अश्रद्धा और कुतर्क है वर्तमान प्रतिबंध । बुद्धि कमजोर होती है तो ज्ञानी गुरु मिलने पर भी ज्ञान नहीं होता । बुद्धि की मंदता हटाने के लिए तुलसी के पत्ते चबाकर खायें, सूर्यनारायण को अर्घ्य दें, सूर्यनमस्कार करें । विवेक-वैराग्य से, शास्त्र-चिंतन एवं ध्यान से बुद्धि की मंदता और विषयों की आसक्ति हटती है । श्रद्धा से दुराग्रह दूर होता है । श्रेष्ठ, संत पुरुषों के सत्संग में जाने से, परमात्मा के नाम का जप करने से वर्तमान प्रतिबंध दूर हो जाता है ।

(३) भावी प्रतिबंध : दूसरा जन्म लेना बाकी हो और गुरु मिल जायें तब भी ज्ञान नहीं होगा । जैसे राजा भरत थे । राजपाट छोड़कर गंडकी नदी के किनारे तप करने लगे परंतु वहाँ हिरण के बच्चे में आसक्ति हो गयी । अंत में उसीके चिंतन में मरे तो दूसरे जन्म में हिरण की योनि में आये किंतु किया हुआ तप व्यर्थ नहीं गया, हिरण के शरीर में वे एकादशी व्रत रखते थे । घास भी नहीं खाते थे । फिर तीसरा जन्म हुआ - जड़ जैसे रहने लगे इससे जड़भरत कहलाये । वे ज्ञान पाकर मुक्त हो गये । यह भावी प्रतिबंधक प्रारब्ध था ।

भावी प्रतिबंध किसी-किसीको होता है । हमें होगा ऐसा मानकर साधक को कमजोर नहीं होना चाहिए । साधक को चाहिए कि वह विवेक, वैराग्य एवं सत्संग से भूत और वर्तमान प्रतिबंध को मिटाता जाय । □

संत एकनाथजी महाराज की वाणी

संतसमागमें सुखाची ते राशी ।
म्हणोनि पायांपाशी सलगी केली ॥
वंदू चरणरज घालू लोटांगण ।
अभय ते दान संत देती ॥
पंचमहापातकी विश्वासघातकी ।
ऐशी यासी निकी संतसेवा ॥
एका जनार्दनीं संतांचा मी दास ।
अनन्य पायांस न विसंबे ॥

भावार्थ : संत-समागम से सुख की राशि प्राप्त होती है । इसलिए मैंने संतचरणों का आश्रय लिया है । हम संतों की चरणरज को माथे पर चढ़ायेंगे और उनके चरणों में अहंभाव छोड़कर दंडवत् प्रणाम करेंगे क्योंकि वे सर्वश्रेष्ठ ऐसा अभय दान (मृत्यु के भय से छुटकारा) देते हैं ।

पाँच इन्द्रियाँ महापातकी एवं विश्वासघाती हैं । इनके चंगुल से बचने के लिए संतसेवा उत्तम है । संत एकनाथ महाराज कहते हैं कि मैं केवल संतों का दास हूँ तथा किसी अन्य के आश्रित नहीं रहता हूँ ।

मधु वाता ऋतायते मधुक्षरन्ति सिन्धवः । मध्वीर्नः सन्त्वोषधीः ॥

कर्मशील व्यक्ति के लिए समग्र हवाएँ और नदियाँ मधु-वर्षण करती हैं । औषधियाँ (अन्न आदि) भी मधुमय हो जाती हैं । **(ऋग्वेद : १.९०.६)**

संयोगजन्य सुख की आसक्ति मिटाओ

- पूज्य बापूजी

एक होता है संयोग दूसरा होता है नित्य योग। जीवात्मा का शरीर से, इंद्रियों से, मन से, धन से, दुकान से, मकान से, बाहर के दोस्तों से संयोग है लेकिन परमात्मा से नित्य योग है।

जहाँ संयोग है वहाँ वियोग अवश्य है। जो मिला है उसका बिछुड़ना अवश्यम्भावी है। दूसरा मिले, न मिले इसमें संदेह है किंतु जो मिला है वह बिछुड़ेगा कि नहीं बिछुड़ेगा- यह सोचा नहीं जाता। जो मिला है वह बिछुड़ेगा ही क्योंकि संयोग के पेट में वियोग छुपा है परंतु वियोग के बाद संयोग हो यह कोई जरूरी नहीं है। आप-हम बाह्य रूप से मिले हैं तो बिछुड़ेंगे यह बात पक्की है, फिर से मिलें या न मिलें पता नहीं। तो जहाँ संयोग है वहाँ वियोग है। ऐसे ही आपका और शरीर का संयोग हुआ है। जन्म के पहले शरीर से आपका संबंध नहीं था। मृत्यु के बाद भी शरीर के साथ आपका संबंध नहीं रहेगा। अभी संयोग हुआ तो वियोग भी अभीसे चालू है। जन्म के बाद कोई बाल्यकाल से किशोरावस्था में आया तो पचीस टका मर गया। जवानी में आया, आधा मर गया। बुढ़ापे में आया, पौना मर गया और मौत आयी तो पूरा मर गया। जबसे जन्मा तबसे रोज एक-एक दिन मरते-मरते... आयुष्य के खजाने में से समय निकलते-निकलते आज पूरा हो गया। शरीर से संयोग हुआ, फिर वियोग की गाड़ी चलते-चलते पूरा वियोग हो जाता है। धन से संयोग हुआ, कुर्सी से संयोग हुआ, पत्नी से संयोग हुआ, पुत्र से संयोग हुआ, मित्र से संयोग हुआ तो वियोग चालू है।

अब जो नित्य वियोग में बदल रहे हैं उनको बदलनेवाला समझकर उनसे मधुर व्यवहार करते, लेना-देना करते हुए, एक-दूसरे का मंगल चाहते हुए अपनेको नित्य योग में लाना बुद्धिमानी है।

सत्संग हमें नित्य योग में ले जाता है। जिससे नित्य योग है उसका ज्ञान पाने के लिए बुद्धिरूपी सारथि को सत्संग का रास्ता दिखाओ। सत्यस्वरूप को पाने की तरकीब सिखाओ, ध्यान की कला सिखाओ, जप की विधि सिखाओ और कर्म करते हुए भी कर्तापन की मैल न लगे, नैष्कर्म्य में लगाओ। नित्य संयोगजन्य व्यवहार ऐसा करो कि नित्य योग का अनुभव हो जाय। काँटे से काँटा निकालो। कर्मों से कर्मबंधन काटो। आसक्ति है तो आसक्ति से आसक्ति को काटो।

बोले : आसक्ति से आसक्ति कैसे कटेगी ? 'श्रीमद्भागवत' में माता देवहूति भगवान कपिल से पूछती हैं कि 'संसार अनित्य है, संयोगजन्य सुख मिथ्या है, सदा के लिए कोई किसीका नहीं है, सब मरनेवाले हैं... फिर भी आसक्ति नहीं मिटती। जन्मों से यह जीव को भटका रही है।'

भगवान कपिलजी कहते हैं : 'आसक्ति को संतों ने दुर्जर कहा है किंतु यही आसक्ति

अग्न आयाहि वीतये।

हे परमात्मन् ! हमारे अज्ञान-अन्धकार का नाश करने और ज्ञान-प्रकाश करने के लिए हमारे हृदय-मन्दिरों में प्रकट होइये। (यजुर्वेद : ११.४६)

सत्पुरुषों और सत्संग में हो जाय तो मुक्तिदायी हो जाती है।'

जो संयोग है वह सब वियोग में जा रहा है, ऐसा समझकर आप संयोग का सदुपयोग कर लो तो आसक्ति नहीं होगी और जीवन सत्संगमय हो जायेगा। संयोग को अगर सच्चा मानोगे, पकड़ोगे तो आसक्ति होगी और संयोगजन्य सुख को थामे रखने की आसक्ति सारी चिंताओं का, सारे दुःखों का, सारे दुर्गुणों का उद्गमस्थान है, मूल है। इसलिए सावधान हो जाओ।

तो संयोगजन्य सुख की आसक्ति मिटाने के लिए क्या करें ?

भगवान उपाय बताते हैं :

अनाश्रितः कर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः ।
स संन्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः ॥

'जो पुरुष कर्मफल का आश्रय न लेकर करने योग्य कर्म करता है, वह संन्यासी तथा योगी है और केवल अग्नि का त्याग करनेवाला संन्यासी नहीं है तथा केवल क्रियाओं का त्याग करनेवाला योगी नहीं है।' **(गीता : ६.१)**

जो आसक्तिरहित होकर कर्तव्य कर्म करता है उसका संयोगजन्य सुख का लालच मिटता जाता है और वह नित्य सुख में विश्राम पाता रहता है।

चित्त में फल की आसक्ति होती है तो काम करने की योग्यता दब जाती है। जिसके चित्त में आसक्ति नहीं उसका सहज योग हो जायेगा, नित्य योग हो जायेगा। जो नित्य योग का रास्ता लेता है उसकी बुद्धि ऋतम्भरा हो जाती है। नित्य योग में जगने के लिए आसक्तिरहित कर्म करते जाओ। संतान को जन्म दो, पालो-पोसो, बच्चों को बड़ा करो लेकिन साथ में यह भी जानो कि बेटियाँ ले जायेंगे जमाई, बेटे ले जायेंगी बहुएँ और यह शरीर जायेगा श्मशान। ऐसा समझकर आसक्तिरहित कर्म करोगे तो आपका जिसके साथ नित्य संबंध है, उसका पता चलेगा और आप संन्यास के फल को पा लोगे, योग के फल को पा लोगे।

भगवान कहते हैं :

अनाश्रितः कर्मफलं...

कर्मफल का आश्रय न लेते हुए जो कर्तव्य कर्म करता है, वही संन्यासी तथा योगी है। जिसने केवल अग्नि का त्याग कर दिया कि मैं संन्यासी हूँ अथवा कर्मों का त्याग कर दिया कि मैं योगी हूँ या एकांत में बैठा है, वह संन्यास और योग की ऊँचाई को नहीं छू पाता है। बाहर से कर्म को त्यागकर निष्क्रिय हो के बैठने का नाम योग नहीं है। कर्म के फल का त्याग करने से चित्त नित्य योग में विश्रांति पाने के काबिल होता है। जिन वस्तुओं और व्यक्तियों का हम आश्रय ले रहे हैं, जिनका संयोग हो रहा है उनसे तो वियोग हो ही जायेगा और हम रीते रह जायेंगे, ठनठनपाल रह जायेंगे ! तो जो मिटनेवाले हैं उनका आश्रय नहीं लो। मिटनेवाली वस्तुओं को, शरीर को, इंद्रियों को, घर को, पत्नी को, कुटुम्ब को, परिवार को-यथायोग्य काम, सेवा करके-करवा के व्यवस्थित, धर्म के अनुकूल रखो लेकिन स्वयं को अपने-आपमें योग करके विश्रांति दिला दो।

ऋषि दयानंद कहते थे कि सद्गृहस्थ को प्रतिदिन दो घंटे परमात्म-ध्यान करना चाहिए। इससे संयोगजन्य सुख की आसक्ति मिटेगी। यह भोग लूँ तो मजा आये, यह चख लूँ तो

उदीरतां सुनृता उत्पुरन्धीरुदग्नयः शुशुचानासो अस्थुः ।

हमारे मुख से प्रिय एवं सत्य वाणी मुखरित हो, हमारी प्रज्ञा उन्मुख-प्रबुद्ध हो, सत्कर्म के लिए हमारा अत्यन्त देदीप्यमान तेजस्तत्त्व (संकल्प बल) पूर्णरूपेण प्रज्वलित हो। **(ऋग्वेद : १.१२३.६)**

मजा आये, इससे मिलूँ तो मजा आये...- यह जो दीनता है, स्वार्थ है वह आदमी की योग्यता हर लेता है । इसलिए गृहस्थी को प्रतिदिन कम-से-कम दो घंटे परमात्मा का ध्यान करना चाहिए ताकि असली मजा और असली योग्यता उभार सके । साधु को, जिन्होंने संन्यास के वस्त्र पहने हैं, घरबार और संसार की प्रवृत्ति का त्याग किया है, उन्हें रोज कम-से-कम चार घंटे ध्यान करना चाहिए ।

कर नसीबांवाले सत्संग दो घड़ियाँ ।

सत्य का संग दो घंटे करते-करते वे घड़ियाँ आ जायेंगी कि बिल्कुल साफ-सुथरा परब्रह्म परमात्मा के नित्य योग का अनुभव हो जायेगा । दो घड़ी नहीं तो एक घड़ी, एक घड़ी नहीं तो आधी घड़ी, आधी भी नहीं तो आधी से भी आधी घड़ी अगर वह सत्संग, परमात्म-ध्यान हो जाय, मन को नित्य योग के तरफ चस्का लग जाय तो कल्याण हो जाय, मंगल हो जाय ।

जिसका नित्य योग है उसमें विश्रांति पाइये । जिसका साथ कभी नहीं छूटता है उस साथी की ओर आइये । जो सदा नहीं रहता उसका सदुपयोग कीजिये और आसक्ति मिटाइये, जो सदा रहता है उसका सत्संग करके पता लगाइये तथा उस पिया को पाइये ।

अमर किसका बेटा रहा ?

नर्मदा किनारे एक संत थे लालजी महाराज । उन्होंने मुझे एक घटित घटना सुनायी । एक माई के इकलौते बेटे को साँप ने काटा, वह मर गया । गाँव में माई का बड़ा प्रभाव था । पति तो वर्षों पहले चल बसे थे और जो बुढ़ापे का सहारा था जवान बेटा वह भी मर गया । लोग रोते-रोते आये ।

माई ने कहा : ''खबरदार ! जो न मरनेवाला हो वह मेरे घर रोता-रोता आये ।''

लोग बोले : ''माँ ! तुम्हारा बेटा मर गया और तुम... ।''

माई : ''अमर किसका बेटा रहा ? मेरा शरीर भी मरेगा । इस मरनेवाले शरीर में चैतन्य आया और लीला की । जैसे सागर में बुदबुदा पैदा हुआ और लीन हो गया, इसमें तुम रोते क्यों हो ?''

संयोगजन्य जो भी सुख है उसके पीछे नित्य वियोग का नृत्य चालू ही होता है लेकिन जिससे नित्य योग है उससे कभी वियोग नहीं । परमात्मा के साथ तुम्हारा-हमारा, सभीका नित्य योग है परंतु संयोग-वियोग में इतने उलझे कि नित्य योग का अनादर हो गया और संयोग-वियोग के थपेड़े खा-खा के सब मर गये ।

दुःख क्यों होता है ? कि जिसका संयोग है उसका वियोग होता है... संयोग... वियोग... संयोग... वियोग... सुख... दुःख... सुख... दुःख... इसमें तुम इतने उलझ जाते हो कि नित्य योग का पता नहीं । जैसे लहरें चलीं, तरंगें चलीं, बुलबुले और झाग चली तो समुद्र में जो गहरा पानी शांत है उसका पता नहीं चलता ।

''माई ! तेरे बेटे की लाश पड़ी है और तू हमको उपदेश दे रही है !''

बोली : ''मैं उपदेश नहीं देती । गुरुजी से, शास्त्र से जो बात सीखी है उसके कारण मेरा संतोष तुमको मिल जाय और तुम्हारा रुदन मिट जाय, तुम्हारी अशांति व दुःख मिट जाय इसलिए

परि माग्ने दुश्चरितादबाधस्वा मा सुचरिते भज ।

हे ज्ञानस्वरूप परमेश्वर ! आप मुझे दुराचरणों से दूर कर श्रेष्ठ धर्माचरणयुक्त व्यवहारों में स्थापित कीजिये । **(यजुर्वेद : ४.२८)**

मैं प्रार्थना करती हूँ।''

व्यवहार में कभी नाटक करना पड़े तो करो लेकिन समझो कि भाई! संसार तो यही है। भगवान श्रीराम के होते हुए माँ कौशल्या को विधवा होने का दुःख देखना पड़ा। भगवान जिनके पुत्र हैं उन माताओं का भी संयोगजन्य सुख सदा नहीं रहा। इस जगत के संयोगजन्य सुख में तो भगवान श्रीराम के बाप भी रोते-रोते गये तो दूसरों की क्या बात है ? जगत का यह संयोगजन्य सुख दिखाता है कि नित्य योग की तरफ जाओ लेकिन इसमें (संयोगजन्य सुख में) अगर गये तो दुःख भोगना पड़ता है। इसलिए सावधान हो जाओ। अनित्य छूट जाय और रुला दे उसके पहले नित्य को पा लेना बुद्धिमानी है। नश्वर छूट जाय और रुलाये उसके पहले शाश्वत को समझ लेना, जान लेना ऊँची बात है।

नित्य योग को जो जान लेता है वह नित्य सुख को, नित्य जीवन को, नित्य माने सत्यस्वरूप ईश्वर को पा लेता है। □

आरंगरेव मध्वेरयेथे सारघेव
गवि नीचीनबारे।
कीनारेव स्वेदमासिष्विदाना
क्षामेवोर्जा सूयवसात्सचेथे॥

'मधुर जल की वर्षा करनेवाले मेघों के समान सदैव मधुर वचनों की वृष्टि करो अर्थात् मधुरभाषी बनो, मधुमक्खियों के समान गुणग्राही बनो एवं किसानों के समान परिश्रम करते हुए भी शक्तिसंपन्न रहो।'

(ऋग्वेद : १०.१०६.१०)

कलियुग के दुष्प्रभाव से कैसे पार हों ?

कलियुग के दुष्प्रभाव से तर जाने का अत्यंत सरल उपाय बतानेवाला कृष्णयजुर्वेदीय उपनिषद् है 'कलिसंतरणोपनिषद्'। इसमें हरिनाम की महिमा वर्णित होने से इसे 'हरिनामोपनिषद्' भी कहा जाता है। भगवन्नाम की महिमा वेद-उपनिषद् भी गाते हैं तथा भगवन्नाम-जप भगवत्प्राप्ति का वेदसम्मत सुगम साधन है।

इसमें आता है कि द्वापर युग के अंतकाल में देवर्षि नारद ने भगवान ब्रह्माजी से पूछा :

''हे भगवन् ! मैं पृथ्वीलोक में भ्रमण करता हुआ किस प्रकार से कलिकाल से मुक्ति पाने में समर्थ हो सकता हूँ ?''

यह सुनकर भगवान ब्रह्माजी ने आचमन लिया और ध्यानस्थ होकर कलियुग के दोषों-दुःखों से पार लगानेवाला एक सुंदर उपाय खोजा। वे प्रसन्नमुख हो नारदजी से इस प्रकार बोले :

''हे वत्स ! तुमने आज मुझसे अत्यन्त प्रिय बात पूछी है। आज मैं समस्त श्रुतियों का जो अत्यन्त गुप्त रहस्य है, उसे बतलाता हूँ, सुनो। इसके श्रवणमात्र से ही कलियुग में संसार-सागर

नि तद् दधिषेऽवरे परे यस्मिन्नाविथावसा दुरोणे।

जिस घर में छोटे-बड़े सब मिलकर रहते हैं वह घर अपने बल पर सदा सुरक्षित रहता है।

(अथर्ववेद : ५.२.६)

को पार कर लोगे। बेटा ! कलियुग के सभी दोषों-दुःखों को मिटाने का एक ही तरीका है :

भगवत आदिपुरुषस्य नारायणस्य
नामोच्चारणमात्रेण निर्धूतकलिर्भवति ॥

'भगवान आदिपुरुष श्रीनारायण के पवित्र नाम के उच्चारणमात्र से मनुष्य कलिकाल के समस्त दोषों को विनष्ट कर डालता है।'

भगवान के नाम का सुमिरन लोगों को पाप, ताप, अशांति व दुःखों से बचायेगा और ब्रह्म-परमात्मा का रस जगा देगा।

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ॥''

देवर्षि नारदजी के चेहरे पर विशेष प्रसन्नता की एक लहर दौड़ आयी। उन्होंने ब्रह्माजी को अभिवादन करते हुए कहा : ''इतना सुंदर, कल्याणकारी मार्ग आपने बताया। **भगवन्कोऽस्य विधिः ?** हे भगवन् ! अब यह बताइये कि भगवन्नाम के जप की क्या विधि है ?''

ब्रह्माजी ने कहा : ''**नास्य विधिः ।** कोई विधि नहीं। शुद्ध हो अथवा अशुद्ध, हर स्थिति में भगवन्नाम का सतत जप करनेवाला मनुष्य सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य एवं सायुज्य आदि सभी तरह की मुक्ति को प्राप्त कर लेता है।''

भगवान ब्रह्माजी की ऐसी सरल युक्ति सुनकर देवर्षि नारदजी ने धन्यता का अनुभव किया।

सत्संग से केवल यह समझ लो कि 'भगवान मेरे हैं और मैं भगवान का हूँ।' फिर उनके नाम का सुमिरन करो। जब भगवन्नाम-सुमिरन करोगे तब आपके मन-बुद्धि में सात्त्विकता का प्रकाश एवं समता का उदय होने लगेगा। आपके मन-बुद्धि पर, आपके मस्तिष्क पर जो दुःखों के धक्के लगते हैं, उनका असर कम होने लगेगा और अंदर का सुख उभरने लगेगा। आप झंझट-प्रूफ, शोक-प्रूफ होने लगेंगे। भगवान की प्रीतिपूर्वक स्मृति आपको दुःख-प्रूफ बना देगी, चिंता-प्रूफ बना देगी, बीमारी-प्रूफ बना देगी, जन्म-मरण प्रूफ बना देगी।

आपि जपहु अवरा नामु जपावहु।
सुनत कहत रहत गति पावहु ।

'प्रभु का नाम स्वयं जपो और दूसरों को जपने के लिए प्रेरित करो। नाम सुनते, कहते और पवित्र आचरण से रहते हुए उच्च अवस्था बन जायेगी।' **(सुखमनी साहिब)**

चारों युगों में से कलियुग में भगवन्नाम की महिमा विशेष है, इस बात पर प्रकाश डालते हुए भगवान श्री वेदव्यासजी कहते हैं :

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम् ।
कलौ नास्त्येव नास्त्येवगतिरन्यथा ॥

'कलियुग में भवसागर से पार होने का साधन हरिनाम, हरिनाम और केवल हरिनाम ही है। इस युग में इसके अतिरिक्त दूसरा कोई साधन नहीं है।' **(बृहन्नारदीय पुराण)**

संत तुलसीदासजी ने भी कहा है :

कलिजुग केवल हरि गुन गाहा।
गावत नर पावहिं भव थाहा ॥
कलिजुग जोग न जग्य न ग्याना।
एक अधार राम गुन गाना ॥
(रामचरित. उ.कां. : १०२.२-३)

भगवत्प्राप्ति के लिए चित्तशुद्धि, मन की निर्मलता अनिवार्य है। इसके साधनों में भगवन्नाम के अलावा अन्य साधन आज उनके सम्पूर्ण विधि-विधान एवं सावधानी से सम्पन्न किये जा सकें, ऐसी स्थिति नहीं है। इसलिए आज के युग में तो भगवत्प्राप्ति के लिए भगवन्नाम-जप ही एकमात्र सर्वसुलभ साधन है। ❑

उत्तिष्ठत प्र तरता सखायः ।

हे मित्रो ! कटिबद्ध हो जाओ, पुरुषार्थी बनो; संसाररूपी सागर से पार हो जाओ, दुःखों को लाँघ जाओ। **(यजुर्वेद : ३५.१०)**

देवन को देव तू....

- पूज्य बापूजी

आपनै अज्ञान तैं जगत सब तू ही रचै ।
सर्व को संहार करैं आप अविनाशी है ॥
मिथ्या परपंच देखि दुख जिन आनि जिय।
देवन को देव तू तो सब सुखरासी है ॥

(विचार सागर : ६.१२)

अपने आत्मस्वरूप के अज्ञान से अविद्यमान शरीर में 'मैं' बुद्धि हो गयी और अविद्यमान सुख-दुःख में सत्बुद्धि हो गयी। इसलिए 'ये परिस्थितियाँ बदलती हैं फिर भी चेतन अबदल आत्मा ज्यों-का-त्यों रहता है। जो अबदल है वह मैं हूँ और जो बदलता है वह माया है, अविद्या है।' इसका प्रेमपूर्वक, आदरपूर्वक चिन्तन करें और बुद्धि को स्वच्छ करें। ज्यों-ज्यों बुद्धि निर्मल होती है त्यों ज्ञान का प्रकाश बढ़ता है। आत्मज्ञान पाना कठिन नहीं है। यह आत्मविद्या जिसने पा ली उसके लिए दूसरी सब विद्याएँ खेल हैं।

एक महत्त्वपूर्ण चीज को जान लो फिर छोटी-छोटी चीजें जितनी भी जाननी हैं, जानते रहना और छोटी-छोटी चीजें, छोटे-छोटे विषय कितने तुम जानोगे, कितने विषयों में तुम विशेषज्ञ हो जाओगे ? सारे विषय जिससे सत्ता पाते हैं उस सत्ता को जान लो न ! कान के विशेषज्ञ अलग तो नाक के अलग। पूरे शरीर के विशेषज्ञ तो नहीं, केवल नाक में ही सारी जिन्दगी खत्म या तो मगज के एक हिस्से में सारी जिन्दगी खत्म। अरे, ब्रह्माण्ड का जो सार है उसमें थोड़ा-सा समय लगा दे, बस हो गया।

पाश्चात्य पढ़ाई से हम लोग बड़े ठगे गये। बहुत ठगे गये। सार बात को जानने का महत्त्व नहीं है, इसलिए सार बात मिलती है तभी भी आदमी को वह संस्कार नहीं पड़ता है। जैसे डालडा घी खाने की आदत है तो देशी घी की गंध ही अच्छी नहीं लगती। ऐसे फालतू बातें सीखने का जो खोपड़ी में भर गया न, तो कई मूर्खों को तो असली बात की गंध भी अच्छी नहीं लगती। तुम लोगों को यह अच्छी लगती है तो समझो यह भी भगवान की दया है, कुछ पात्रता है।

तुलसी पूर्व के पाप से हरि चर्चा न सुहाय।
जैसे ज्वर के जोर से भूख विदा हो जाय ॥

पाप अगर जोरदार हैं तो यह ब्रह्मज्ञान की बात रुचती नहीं है, इसमें प्रीति नहीं होती। पापी आदमी की यह पहचान है कि ब्रह्मज्ञान पाने के लिए वह कोशिश नहीं करेगा। शरीर की सुविधा और शरीर की पदवियाँ ही उसकी खोपड़ी में सार लगेंगी। ऐसे पाप संस्कार के दबाव से ब्रह्मज्ञान की भूख ही चली जाती है, साक्षात्कार करने की भूख ही चली जाती है। हकीकत में तो बालक जन्म लेता है तो भूख लेकर आता है :

''पापा ! यह क्या है ?''

''बेटा ! चिड़िया।''

महिमा तेऽन्येन न सन्नशे।

हे शक्तिशालिन् ! तेरी महिमा दूसरे के द्वारा प्राप्त नहीं करायी जा सकती है और न दूसरे के द्वारा मिटायी जा सकती है।

(यजुर्वेद : २३.१५)

''यह क्या है ?''

''कौवा है।''

''अच्छा, कौवा है ! तो यह क्या है ?''

''बेटा ! यह साइकिल है।''

''यह साईतल है ! यह क्या है ?''

''यह कबूतर है।''

इतना सुनाकर बाप काम पर चला गया फिर माँ से सीखा। जो कोई मिलता है वह बच्चा उससे पूछता है। तो जानने की, ज्ञान पाने की इच्छा तो जन्मजात भूख है। 'यह क्या है ? यह क्या है ?' तो पूछ पाता है लेकिन 'मैं कौन हूँ ?' यह पूछे उसके पहले ही उसके ऊपर रख देते हैं नाम - तू बबलू है, तू जबलू है, तू गोबर गणेश है, तू विजय है, तू अजय है। 'मैं क्या हूँ ?' यह पूछे उसके पहले उसके ऊपर नाम थोप दिया। गुरु नानकजी बोलते हैं :

मन तू ज्योतिस्वरूप, अपना मूल पिछान।

'मैं क्या हूँ ?' अपने मूल को जान ले। यह तो तेरे शरीर का नाम रखा है बच्चे ! ऐसे शरीर तो कई पैदा हुए और चले गये। शरीर का नाम रख दिया 'हेमन्त', उसकी जगह पर 'मोहन' रखते तो अपनेको मोहन मानता। यह जो नाम थोप दिया गया शरीर पर, यह तो सुनकर तूने माना है लेकिन नाम रखने के पहले भी तो तू था, शरीर के जन्म के पहले भी तो तू था। तू कौन है ? रोज खोज अपनेको। अपना पता नहीं और फिक्र सारे गाँव की। अपनेको तो जानते नहीं और चले हैं दुनिया को ठीक करने, नीरोग करने, सुखी करने, उपदेश देने को। यह तो पागलों की महफिल है संसार !

संसार एक पागलखाना है। अविद्या की भाँग पीकर सब मतवाले हो गये हैं। एक-दो की बात नहीं, जो भी आया उसने वही अविद्या की भाँग पी और चला।

एक भूला दूजा भूला भूला सब संसार।
बिन भूला एक गोरखा जिसको गुरु का आधार ॥

जिसे गुरु के ब्रह्मज्ञान का आधार है वह बिन भूला है, बाकी सब भूल में हैं। ❑

मानवी प्रकृति

स्वास्थ्य व दीर्घायुष्य की कामना करनेवाले पुरुष को अपने आरोग्य की रक्षा, सम्यक् आहार-विहार के निश्चय व व्याधि उत्पन्न होने पर उसे शीघ्र नियंत्रित करने के लिए अपनी प्रकृति का ज्ञान होना आवश्यक है।

प्रत्येक मनुष्य का विशिष्ट शारीरिक स्वरूप तथा मानसिक स्वभाव होता है। इसे उसकी प्रकृति कहते हैं।

गर्भधारण काल में जिस दोष की प्रधानता होती है, उसके अनुसार मनुष्य की प्रकृति बनती है। साथ ही गर्भाशयगत दोष-स्थिति, तत्कालीन ऋतु, गर्भिणी का आहार-इच्छा-चेष्टा, जीव के कर्म, गर्भारंभक शुक्र-आर्तव आदि प्रमुख घटकों का प्रभाव भी मनुष्य की प्रकृति के निर्माण पर पड़ता है।

दोष की प्रधानता के अनुसार मनुष्य वातल, पित्तल, श्लेष्मल, द्वंद्वज अथवा सम प्रकृतिवाले होते हैं। दो दोषों की प्रधानता से बनी प्रकृति को द्वंद्वज व जिसमें त्रिदोषों की सम अवस्था हो उसे सम प्रकृति कहते हैं। वातप्रकृति हीन, पित्तप्रकृति मध्यम, कफप्रकृति उत्तम, द्वंद्वज निंद्य व समप्रकृति सर्वश्रेष्ठ होती है। ❑

अदितिरसि।

हे मानव ! तू दीन-हीन नहीं है अपितु तू अदीन (दीनतारहित) है, अदम्य शक्तियों का पुंज है।

(यजुर्वेद : ४.२१)

महान भगवद्भक्त प्रह्लाद

(अंक १७६ से आगे)

अपना ऐश्वर्य-हरण होने के बाद प्रह्लादजी तपस्वी के रूप में दुःखी नहीं बल्कि परम प्रसन्न थे। वे जानते थे कि भगवान की स्मृति ही वास्तविक सम्पदा है और विस्मृति ही वास्तविक विपदा है।

तपोभूमि में प्रह्लादजी निरहंकारी, सत्त्वगुणावलम्बी, शम, दम आदि गुणों में अनुरक्त और स्तुति-निन्दा में समबुद्धि रखते हुए जितेन्द्रिय होकर रहते थे। शास्त्रानुशीलन करते हुए वे एकान्त में बैठ समस्त स्थावर-जंगमरूपी संसार की उत्पत्ति और प्रलय के कारणस्वरूप परमात्मा का ध्यान करते थे। कभी अप्रिय विषय से क्रुद्ध और प्रिय विषय-लाभ में हर्षित नहीं होते थे।

तपस्वी प्रह्लादजी की अवस्था देखने के लिए एक दिन देवराज इन्द्र उनके समीप पहुँचे और बोले : ''हे दैत्यवंश शिरोमणि प्रह्लाद ! इस लोक में जिन गुणों के रहने से लोगों के बीच पुरुष सबसे अधिक प्रतिष्ठित होता है, वे सब स्थिर गुण आपमें विद्यमान हैं और आपकी बुद्धि बालक के समान राग-द्वेष से रहित दिखायी पड़ती है। बताइये, आप आत्मज्ञान का श्रेष्ठ साधन क्या समझते हैं ?

हे प्रह्लाद ! आप स्थानच्युत, ऐश्वर्यहीन होने पर भी शोचनीय विषय का शोक नहीं करते । आप अपनी विपत्ति को देखकर भी कैसे स्वस्थचित्त हो रहे हैं ?''

प्रह्लादजी बोले : ''हे देवराज ! जो लोग आत्मा में कर्तृत्व-भोक्तृत्व आदि आरोपित करते हैं, उन पुरुषों की बुद्धि मूढ़ता के कारण स्तम्भित होती है परंतु जिसे जीव और ब्रह्म में यथार्थ रूप से एकत्व का ज्ञान है उसकी बुद्धि स्तम्भित नहीं हो सकती । भाव और अभावरूप सभी पदार्थ स्वभाव ही से प्रवृत्त और निवृत्त होते रहते हैं । बछड़ा उत्पन्न होने के पहले ही गौओं के रुधिर-पूरित स्तनों में दूध उत्पन्न हो जाता है । उस समय उसके प्रवर्तक वात्सल्यभाव के न रहने पर भी जैसे स्वाभाविक ही दूध की उत्पत्ति होती है, ठीक वैसे ही सभी पदार्थ स्वभाव ही से उत्पन्न होते हैं, उनकी उत्पत्ति में किसी प्रवर्तक की अपेक्षा नहीं होती । इसलिए अकर्ता होने से आत्मा के लिए भोग और मोक्षरूप पुरुषार्थ का भी कोई प्रयोजन नहीं है । उसके स्वयं अकर्ता होते हुए भी अविद्या के कारण अहंकार फुरता रहता है । जो अपने आत्मा को शुभ या अशुभ कर्मों का कर्ता मानता है, मेरे विचार से उसकी बुद्धि दोषमयी है। वह वास्तविक आत्मस्वरूप को नहीं जानता ।

हे इन्द्र ! यदि पुरुष ही कर्ता हो तो उसके आत्मकल्याण के निमित्त किये हुए सभी कार्य अवश्य ही सिद्ध होने चाहिए और उसको कभी विफल-मनोरथ न होना चाहिए । किंतु जब हम देखते हैं कि अपने हित के यत्न में लगे हुए मनुष्यों के मनोरथ सिद्ध नहीं होते और उन्हें अनिच्छित विपरीत फल मिल जाता है, तब उन्हींका पुरुषार्थ

श्रद्धया सत्यमाप्यते । श्रद्धा से सत्यस्वरूप परमेश्वर की प्राप्ति होती है । **(यजुर्वेद : १९.३०)**

त्वमभि तिष्ठ पृतन्यतः ।

हे विद्वन् ! तू आन्तरिक और बाह्य शत्रुओं के समक्ष डट जा । **(यजुर्वेद : ११.२०)**

कैसे स्वीकार किया जा सकता है ? और जब हम यह भी देखते हैं कि (अदृष्ट की प्रतिकूलता से) किन्हीं-किन्हींका कोई प्रयत्न न करने पर भी स्वभाव से ही अनिष्ट हो जाता है और इष्ट होते-होते रुक जाता है और किन्हीं-किन्हीं लोगों को परम सुन्दर और अत्यन्त बुद्धिमान होने पर भी अत्यन्त कुरूप और अल्पबुद्धि के लोगों से धनादि लाभ की इच्छा रहती है।

इस प्रकार जब सब शुभाशुभ गुण स्वभाव से ही प्रेरित होकर पुरुषों में स्थित होते हैं, तब 'मैं सुखी हूँ, मैं कर्ता हूँ, मैं भोक्ता हूँ' इत्यादि अभिमान करने का कुछ भी कारण नहीं है। सुख, दुःख आदि सभी विषय स्वभाव-संबंधित ही हुआ करते हैं, अतएव सुख में प्रसन्न और दुःख से अप्रसन्न होने का कोई कारण नहीं है। हे सुरेश्वर ! मेरे विचार से तो मुक्ति और आत्मज्ञान भी स्वभाव से स्वतंत्र नहीं हैं। इस लोक में शुभाशुभ फल का भोग भी कर्मजनित ही है, इसे सब लोग स्वीकार करते हैं, अतएव अब मैं सभी कर्मों का शेष विवरण कहता हूँ, सुनो।

जैसे अन्न को खाता हुआ कौआ शब्द करते उसको प्रकट करता है, वैसे ही सभी कर्म स्वभाव के असाधारण धर्म हैं अर्थात् सारे कर्म स्वभाव को ही प्रकाशित करते हैं।

जैसे सूत्र वस्त्र के कारण होने से सूत्रों के रंग वस्त्र की विचित्रता में कारण होते हैं, वैसे ही स्वभाव ही मनुष्यादि प्राणियों के जन्मादि का कारण है। जो पुरुष धर्माधर्म आदि समस्त विकारों को जानते हैं और त्रिगुणमयी प्रकृति से परे, सबके आधार ब्रह्म को नहीं जानते उन कर्मप्रधान और भेददर्शी पुरुषों में ही मूढ़ता से जड़ता हुआ करती है। जो सर्वाधार चैतन्यस्वरूप का ही अवलोकन करते हैं, उनमें जड़ता नहीं होती। जिन्होंने सभी पदार्थों को निश्चयरूप से ही स्वभाव से उत्पन्न हुए जाना है, दर्प और अभिमान उनका कुछ भी नहीं कर सकता।

हे देवराज ! मैं जानता हूँ कि सभी वस्तुएँ अनित्य हैं, इसी कारण अपने छीने गये ऐश्वर्य और प्रभुत्व के लिए शोक नहीं करता। मैं ममताहीन, निरहंकारी, आशा-वासना से रहित, माया के बंधन से मुक्त और देह आदि में अभिमान से रहित होने के कारण स्वरूप-स्थिति से कभी विचलित नहीं होता। इसीसे जीवों की उत्पत्ति और विनाश के परम कारण परब्रह्म परमात्मा को देखता हूँ।''

(क्रमशः) ❐

बेहतर है

बेहतर है कि अब तेरी तस्वीर सजा लें हम।
ख्वाबों की इस तरह ही ताबीर बना लें हम॥

बस चंद नसीब वाले दीदार तेरा पाते।
तस्वीर को जब चाहें आँखों में बसा लें हम॥

इनकार तेरा लेता है इम्तिहाँ हमारा।
तस्वीर से जब चाहें इकरार करा लें हम॥

तुझसे मिले भी गर तो धड़का है जुदाई का।
तस्वीर से जब चाहें शबे-वस्ल मना लें हम॥

तू रुठ न जाये बस हर वक्त फिक्र है ये।
तस्वीर मुस्कुराये-रुठे तो मना लें हम॥

तुझ तक पहुँचना मुश्किल है 'चाँद' पाने जैसा।
तस्वीर को जब चाहें सीने से लगा लें हम॥

- 'चाँद' लखनवी, लखनऊ (उ.प्र.)।

आप्नोति सूक्तवाकेनाशिषः।
मीठा और मधुर बोलने से मनुष्य को आशीर्वाद मिलता है। **(यजुर्वेद : १९.२९)**

भद्रवाच्याय प्रेषितो मानुषः। मनुष्य इस संसार में मधुर भाषण के लिए भेजा गया है। (यजुर्वेद : २१.६१)

नेत्ररोगनिवारक, मेधा व दृष्टि शक्तिवर्धक त्रिफला रसायन कल्प

त्रिफला रसायन कल्प त्रिदोषशामक, इंद्रिय-बलवर्धक विशेषतः नेत्रों के लिए हितकर, वृद्धावस्था को रोकनेवाला व मेधाशक्ति बढ़ानेवाला है। इसके सेवन से नेत्रज्योति में आश्चर्यकारक वृद्धि होती है। दृष्टिमांद्य, रतौंधी, मोतियाबिंदु, काँचबिंदु आदि नेत्ररोगों से रक्षा होती है। बाल काले, घने व मजबूत बनते हैं। ४० दिन तक विधियुक्त सेवन करने से स्मृति, बुद्धि, बल व वीर्य में वृद्धि होती है। ६० दिन तक सेवन करने से यह विशेष प्रभाव दिखाता है। जगजाहिर है कि इस प्रयोग से पूज्य बापूजी को अद्‌भुत लाभ हुआ है, चश्मा उतर गया है।

विधि : शरदपूर्णिमा की रात को चाँदी के पात्र में ३५० ग्राम त्रिफला चूर्ण, ३५० ग्राम देसी गाय का घी व १७५ ग्राम शुद्ध शहद मिलाकर पात्र को पतले सफेद वस्त्र से ढँककर रात भर चाँदनी में रखें। दूसरे दिन सुबह इस मिश्रण को काँच अथवा चीनी मिट्टी के पात्र में भर लें। (उपर्युक्त मात्राएँ ४० दिन के प्रयोग के लिए हैं। ६० दिन के प्रयोग के लिए त्रिफला, घी व शहद की मात्राएँ डेढ़ गुनी लें।)

सेवन-विधि : ११ ग्राम मिश्रण सुबह-शाम गुनगुने पानी के साथ लें (बालकों के लिए मात्रा : ६ ग्राम)।

दिन में केवल एक बार सात्त्विक, सुपाच्य भोजन करें। इन दिनों में भोजन में नमक कम हो तो अच्छा है। साधारण नमक की जगह सेंधा नमक का उपयोग विशेष लाभदायक है। सुबह-शाम गाय का दूध ले सकते हैं। दूध व रसायन के सेवन में दो-ढाई घंटे का अंतर रखना आवश्यक है। कल्प के दिनों में खट्टे, तले हुए, मिर्च-मसालेयुक्त व पचने में भारी पदार्थों का सेवन निषिद्ध है। इन दिनों में केवल दूध-चावल, दूध-दलिया अथवा दूध-रोटी का सेवन अधिक गुणकारी है।

इस प्रयोग के बाद ४० दिन तक मामरा बादाम का उपयोग विशेष लाभदायी होगा। कल्प के दिनों में नेत्रबिंदु का प्रयोग अवश्य करें।

***

* विजयादशमी से शरद पूनम (२१ अक्टूबर से २५ अक्टूबर) तक रात्रि में १०-१५ मिनट चंद्रमा की ओर देखने से नेत्रज्योति बढ़ती है। नेत्ररोगों में भी लाभ होता है। □

दुःखिताय शयानाय श्रद्दधानाय रोगिणे। यो भेषजमविज्ञाय प्राज्ञमानी प्रयच्छति ॥
त्यक्तधर्मस्य पापस्य मृत्युभूतस्य दुर्मतेः। नरो नरकपाती स्यात्तस्य सम्भाषणादपि ॥

'अपनेको ज्ञानी समझनेवाला जो वैद्य दुःखी, शय्या पर पड़े हुए श्रद्धालु रोगी को बिना समझे-बूझे औषधि देता है, उस धर्महीन, पापी, मृत्युतुल्य, दुर्मति (मूर्ख) वैद्य से बात करने पर भी मनुष्य नरक का भागी होता है।'

(चरक संहिता, सूत्रस्थानम् : १.१३०-३१)

***

यदुवक्थानृतं जिह्वया वृजिनं बहु।

जिह्वा से असत्य वचन बोलना बहुत बड़ा पाप है। (अथर्ववेद : १.१०.३)

शीतकाल में बलसंवर्धनार्थ : मालिश

शीतकाल अर्थात् हेमंत व शिशिर ऋतुएँ (२३ अक्टूबर २००७ से १८ फरवरी २००८ तक) बलसंवर्धन का काल है। कार्तिक से लेकर माघ तक के चार महीनों में संपूर्ण वर्ष के लिए शरीर में शक्ति का संचय किया जाता है। शक्ति के लिए केवल पौष्टिक, बलवर्धक पदार्थों का सेवन ही पर्याप्त नहीं है अपितु मालिश (अभ्यंग), आसन, व्यायाम भी आवश्यक हैं। शीतकाल में मालिश विशेष सेवनीय है।

आयुर्वेद के श्रेष्ठ मुनि श्री सुश्रुताचार्यजी कहते हैं :

प्राणाश्च स्नेहभूयिष्ठाः स्नेह साध्याश्च भवन्ति ।

'मनुष्य का जीवन (बल) स्नेह पर आधारित है तथा उसकी रक्षा भी स्नेह द्वारा ही होती है।'

(सुश्रुत चिकित्सास्थान : ३१.३)

स्नेह (तेल, घी आदि) का उपयोग दो प्रकार से किया जाता है - सेवन व मालिश के द्वारा।

'स्वास्थ्य-संहिता' के अनुसार घी का सेवन करने से भी आठ गुनी शक्ति उतनी ही मात्रा में तैल-मर्दन अर्थात् मालिश से मिलती है।

तेल से नियमित की गयी मालिश सतत कार्यरत शरीर में दृढ़ता, आघात सहने की क्षमता व प्रतिक्षण होनेवाली शरीर की क्षति की पूर्ति करती है। स्नायुओं व अस्थियों को पुष्ट कर शरीर को मजबूत व सुडौल बनाती है। मालिश से त्वचा स्निग्ध, मुलायम, सुकुमार व कांतियुक्त बनती है, त्वचा पर झुर्रियाँ जल्दी नहीं आतीं। ज्ञानेन्द्रियाँ व कर्मेन्द्रियाँ दीर्घकाल तक कार्यक्षम रहती हैं। वृद्धावस्था देर से आती है। मालिश एक श्रेष्ठ वायुशामक चिकित्सा भी है। पैर के तलुओं की मालिश करने से नेत्रज्योति बढ़ती है, मस्तिष्क शांत हो जाता है व नींद गहरी आती है। मालिश से शारीरिक व मानसिक श्रम से उत्पन्न थकान मिट जाती है। मन प्रसन्न व उत्साहित रहता है। नियमित मालिश आकर्षक व्यक्तित्व प्रदान करती है।

मालिश के लिए तिल तेल सर्वश्रेष्ठ माना गया है। यह उष्ण व हलका होने से शरीर में शीघ्रता से फैलकर स्रोतसों की शुद्धि करता है। **यह उत्तम वायुनाशक व बलवर्धक भी है।** देश, ऋतु, प्रकृति के अनुसार सरसों, नारियल अथवा औषधसिद्ध तेलों (आश्रम में उपलब्ध आँवला तेल) का भी उपयोग किया जा सकता है। सिर के लिए ठंडे व अन्य अवयवों के लिए गुनगुने तेल का उपयोग करें।

तेल का अंतःप्रवेशकाल : त्वचा पर लगाया हुआ तेल रोमकूपों से अंदर प्रवेश कर छः मिनट में बालों के मूल तक पहुँचता है। साढ़े सात मिनट में रक्त, नौ मिनट में मांस, साढ़े दस मिनट में मेद, बारह मिनट में हड्डी व साढ़े तेरह मिनट में मज्जा धातु तक पहुँचता है। सामान्यतः हाथ, पैर, सिर, पेट व छाती की पाँच-पाँच मिनट तथा

आहारशुद्धौ सत्त्वशुद्धिः ।

आहार के शुद्ध होने पर अन्तःकरण की शुद्धि हो जाती है। **(छांदोग्योपनिषद् : ७.२६.२)**

अमृतं क्षीरभोजनम् । दूध का सेवन अमृत के समान है। **(पंचतंत्र : १.१३९)**

पीठ व कमर की कुल दस-पंद्रह मिनट तक मालिश करनी चाहिए ।

मालिश काल : मालिश प्रातःकाल में करनी चाहिए । धूप की तीव्रता बढ़ने पर व भोजन के पश्चात् न करें ।

मालिश विधि :

प्रातः शौचादि से निवृत्त हो चटाई अथवा पलंग पर सीधे लेट जायें। शरीर को ढीला छोड़ दें। सर्वप्रथम सिर के तालु में खूब तेल डाल दें, साथ ही नाभि में भी तेल डालकर रखें। फिर तालु, संपूर्ण सिर, ललाट, नाक व आँखों की हलके हाथ से मालिश करें। तेल की ४-५ बूँदें नाक व कान में भी डाल दें। फिर नाभि में उँगली से धीरे-धीरे मालिश करें। नाभि रक्तवाहक शिराओं का मूलस्थान व जठराग्नि का अभिव्यक्ति स्थान है। नाभि पर डाला हुआ तेल शिराओं के द्वारा संपूर्ण शरीर में फैल जाता है। जठराग्नि को स्नेहरूप इंधन मिलने से उसकी कार्यक्षमता में वृद्धि होती है। इसके बाद चित्र में दर्शाया है उसके अनुसार पैर के तलुओं से लेकर छाती तक सभी अंगों की नीचे से ऊपर की ओर मालिश करें । हृदयस्थान, पेट तथा संधियों पर गोलाकार मालिश करें।
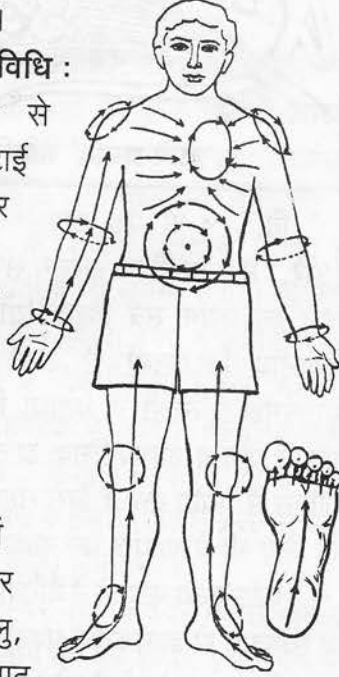
हृदय एक अव्याहत कार्यरत अवयव है। इसकी रक्षा के लिए मालिश आवश्यक है । मालिश हृदय के स्रोतसों का मुख खोलकर उन्हें प्रसारित कर देती है जिससे रक्तवाहिनियों में अवरोध (Coronary artery disease) की संभावना नहीं रहती ।
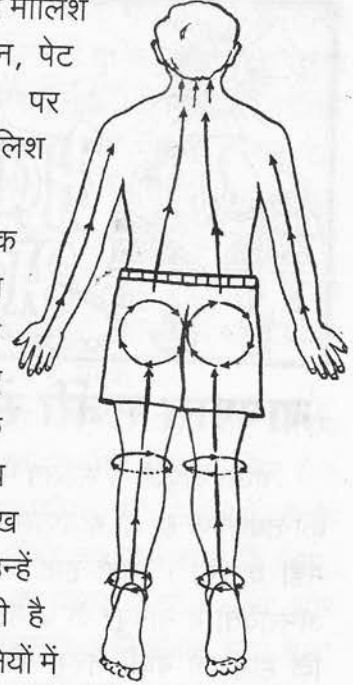
प्रतिदिन सार्वदैहिक अभ्यंग संभव न हो तो नियमित सिर व पैर की मालिश तथा कान, नाभि में तेल डालना चाहिए।

सावधानी : मालिश के बाद ठंडी हवा में न घूमें। १५-२० मिनट बाद बेसन अथवा मुलतानी मिट्टी लगाकर गुनगुने पानी से स्नान करें। नवज्वर, अजीर्ण व कफप्रधान व्याधियों में मालिश न करें। स्थूल व्यक्तियों में अनुलोम गति से अर्थात् ऊपर से नीचे की ओर मालिश करें।

मालिश शीघ्रता से न करें । अन्यथा थकान पैदा करती है । तन्मयता व प्रसन्नता से की गयी मालिश नवचैतन्य व स्फूर्ति प्रदान करती है। ❐

तद्वार्यं वृणीमहे वरिष्ठं गोपयत्यम् । मित्रो यत्पान्ति वरुणो यदर्यमा ॥

'वही धन कामना करने योग्य है जो अत्यंत श्रेष्ठ है व सबका पालन करता है तथा मित्र, वरुण एवं अर्यमा जिस धन की रक्षा करते हैं।'

अर्थात् वही धन उपार्जनीय है जिससे अपना व दूसरों का उपकार तथा हित होता हो ।

(ऋग्वेद : मं.८ सू.२५ मंत्र १३)

बायपास सर्जरी से छुटकारा

पूज्य बापूजी ने सत्संग में कहा था कि 'हार्ट की तकलीफ हो तो बायपास सर्जरी तो बिल्कुल नहीं कराना ।' मुझे हार्ट की तकलीफ हुई । अमरावती व नागपुर के प्रसिद्ध डाक्टरों ने कहा कि हार्ट की बायीं तरफ की एक नाड़ी ९९% ब्लॉक हुई है । १५ दिन के अंदर बायपास सर्जरी कराओ नहीं तो जल्द ही हार्टअटैक आ जायेगा ।

पूज्य बापूजी के कहे वचन मेरे कानों में गूँजते थे। पूज्य सद्गुरुदेव की इसी प्रेरणा से मैंने बायपास सर्जरी नहीं करवायी । सूरत आश्रम में जाकर वहाँ से आयुर्वेदिक औषधि ली और बड़ बादशाह की ७ परिक्रमाएँ कीं । पैदल चलने से मुझे छाती में दर्द होता था किंतु आश्चर्य ! बड़ बादशाह की परिक्रमाएँ करते ही छाती का दर्द गायब हो गया । उसके बाद कोई एलोपैथिक दवाई लेने की जरूरत नहीं पड़ी, न बायपास सर्जरी कराने की नौबत आयी है ।

डॉक्टरों ने तो दिल में भय पैदा कर दिया था किंतु पूज्य सद्गुरुदेव के अमृतरूपी वचनों ने शक्ति दी, प्रेरणा दी। पूज्य सद्गुरुदेव नररूप में श्रीनारायण हैं जो कि हम सबका कल्याण करने के लिए ही अवतरित हुए हैं ।

– परियलदास आलूमल पिंजानी
रामपुरी कैम्प, अमरावती (महाराष्ट्र) । ❐

'ऋषि प्रसाद' प्रतिनिधि

दि. २५ से २७ अगस्त तक **फरीदाबाद (हरि.)** में पूज्यश्री का सत्संग संपन्न हुआ । प्रथम दिन का प्रथम सत्र विद्यार्थियों के नाम रहा । स्थानीय विद्यालयों से आये विद्यार्थियों को योगमर्मज्ञ पूज्यश्री ने बताया कि हमारे ऋषि-प्रणीत योग व आध्यात्मिक ज्ञानराशि का दैनिक जीवन में प्रयोग कर वे कैसे महान व अन्य लोगों के लिए भी प्रेरणापुंज बन सकते हैं ।

परम पूज्य बापूजी ने वैदिक ज्ञान को सरलता व सहजता से ज्ञानवर्द्धक प्रश्नोत्तरी के माध्यम से समझाया । प्रश्नोत्तरी में छोटे-छोटे किंतु गूढ़ प्रश्न शामिल थे । जैसे- सबसे बड़ा लाभ क्या है ? तन, मन व बुद्धि की आरोग्यता सबसे बड़ा लाभ है। सब दानों में श्रेष्ठ दान कौन-सा है? अभयदान जो आत्मज्ञान से ही प्राप्त होता है ।

२७ अगस्त को पूर्णिमा दर्शन-सत्संग के दौरान हरियाणा, पंजाब, उ.प्र., उत्तरांचल व दिल्ली आदि क्षेत्रों के पूनम व्रतधारी शिष्यों को पूज्यश्री ने शरीर स्वस्थ रखने के लिए ऋतु-अनुकूल आहार-विहार की बात बतायी ।

साधना ठीक हो रही है या नहीं ?- यह जानने के लिए पैमाना बताते हुए पूज्य बापूजी ने कहा : ''जो इच्छाएँ पहले आकर्षित करती थीं, उनसे मोह भंग हो रहा है या नहीं ? समता का सद्गुण बढ़ रहा है या नहीं या नेत्रों से प्रेमाभक्ति के आँसू बह रहे हैं या नहीं ? आध्यात्मिकता से

जुड़े लोगों के जीवन में दुःख आये तो उनकी व्यथा योग बन जाती है। वह विषादयोग बन जाता है। जबकि सामान्य आदमी सुख-दुःख के थपेड़ों से प्रभावित होकर मानसिक यंत्रणा व तनाव का शिकार हो जाता है।''

फरीदाबाद में २७ अगस्त को श्रावणी पूर्णिमा दर्शन-सत्संग के बाद पूज्यश्री **गोधरा आश्रम (गुज.)** पहुँचे। वहाँ २८ अगस्त को 'रक्षाबंधन महोत्सव' के साथ ही गुजरात, महाराष्ट्र व निकटस्थ प्रांतों के पूर्णिमा व्रतधारी शिष्यों के लिए पूनम दर्शनोत्सव भी संपन्न हुआ। व्यवहार और वेदांत ज्ञान के निष्णात पूज्य बापूजी ने २८-२९ अगस्त के २ दिवसीय सत्संग में मानव-जीवन के व्यावहारिक व आध्यात्मिक पहलुओं पर प्रकाश डाला। व्यवहार में वेदांत का उपयोग कर सुखमय जीवन व हँसते-खेलते प्रसन्नतामय जीवन जीने की कला सिखायी।

२-४ सितम्बर का त्रिदिवसीय सत्संग व जन्माष्टमी महोत्सव हर वर्ष की तरह इस वर्ष भी **सूरत आश्रम (गुज.)** में संपन्न हुआ। पवित्र सलिला तापी तट पर विशाल आश्रम प्रांगण में ध्यान, भक्ति, ज्ञान व योग की जीवनोत्थानमय विद्या के साथ 'श्रीकृष्ण जन्माष्टमी' आनंद, उल्लास के साथ मनायी गयी। श्रीकृष्ण-लीला की नटखट व मधुर स्मृति में 'मटकी फोड़' कार्यक्रम भी हुआ। मक्खन-मिश्री का प्रसाद भी बँटा।

इस अवसर पर सत्संग की महिमा बताते हुए पूज्यश्री ने कहा : ''सत्संग सुनना पुण्यदायी है लेकिन सत्संग के अनुशासन को भंग नहीं करना चाहिए। मर्यादा में रहकर ही सत्संग श्रवण करना चाहिए।''

हिन्दू संस्कृति की महिमा बताते हुए पूज्यश्री ने कहा : ''आज जिस प्रकार लोग वैदिक संस्कृति का हनन कर रहे हैं, अगर वैसा होने दिया जाय तो धरती पर परात्पर परब्रह्म परमात्मा का अवतरण असंभव हो जायेगा क्योंकि भगवान को अवतरित करने की ताकत अगर है तो केवल हिन्दू संस्कृति में है अन्य मजहबों में नहीं। हिन्दू है तो अवतार है, **'परस्परं भावयन्तु'** की भावना है, **ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षँ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः।** 'स्वर्गलोक, अन्तरिक्षलोक तथा पृथ्वीलोक हमें शांति प्रदान करें। जल शांतिप्रदायक हो, औषधियाँ शांति प्रदान करनेवाली हों।' - यह संदेश है।

जन्माष्टमी का उत्सव स्वार्थ की, शोषण की कंस परंपरा को चुनौती देने के लिए है। अहंकारपरक बाह्य परंपरा की पोल खोलने के लिए, भक्तों की प्रीति का पान करने के लिए, **परस्परं भावयन्तु** का प्रसाद बाँटने के लिए और तुम देख सको, छू सको, नचा सको, बुला सको ऐसे प्रेमी का दीदार करानेवाला अवतार कृष्णावतार है। कृष्णावतार में भगवान ने भक्तों के जूते उठाये, संतों के पैर धोये और उनकी जूठी पत्तल उठायी; इसमें ही ईश्वर का ऐश्वर्य छलकता है। बड़ा आदमी हो गया और झाड़ू लगाने से, जूठा उठाने से अगर बड़प्पन जाता है तो ऐसा बड़प्पन बड़ी दयनीय स्थिति में है।''

७-९ सितम्बर को दिल्ली में आयोजित श्री सुरेशानंदजी के सत्संग के दौरान पूज्यश्री ने दूरभाष से आशीर्वचन दिये जिसका जीवंत प्रसारण 'श्रद्धा चैनल' द्वारा किया जा रहा था।

२२-२३ सितम्बर को **भौंडसी (गुड़गाँव, हरि.)** में पूज्य बापूजी का सत्संग सम्पन्न हुआ। इस छोटे-से ग्राम में करुणासिंधु गुरुवर का यह प्रथम आगमन था।

आस-पास के छोटे-छोटे गाँवों के भक्त भौंडसी में एकत्रित हुए, आनंदित हुए, आत्मविद्या से सुशिक्षित हुए, गुरुमंत्र से दीक्षित हुए। ३-४ वर्षों की प्रार्थना और श्री आसारामायण पाठ फलित हुआ। ❑

राम का अस्तित्व न माननेवाला हलफनामा अपमानजनक : कर्ण सिंह

नई दिल्ली (वार्ता) : कांग्रेस के वरिष्ठ नेता और पूर्व केंद्रीय मंत्री कर्ण सिंह ने 'भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग' के भगवान राम के अस्तित्व पर प्रश्न उठानेवाले हलफनामे को दुर्भाग्यपूर्ण, अपमानजनक और पूरे राष्ट्र को स्तब्ध करनेवाला बताया है । सांसद और विचारक श्री कर्ण सिंह ने एक समाचार पत्र में प्रकाशित अपने एक लेख में कहा है कि पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग का यह दृष्टिकोण समझ से परे है कि रामसेतु, 'एडम्स ब्रिज' एक बालू, प्रवाल, शैल समूह है जिसे ऐतिहासिक, पुरातात्विक या कलात्मक अभिरुचि अथवा महत्त्व का नहीं कहा जा सकता ।

रामसेतु मसले पर पुरातत्व विभाग का यह निष्कर्ष राष्ट्र को स्तब्ध करनेवाला है । सेतु समुद्रम मसले पर विभाग द्वारा उच्चतम न्यायालय में दायर हलफनामे में श्रीराम के अस्तित्व पर संदेह उठाये जाने को लेकर पूरे देश में तीखी प्रतिक्रिया हुई थी तथा कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गाँधी के हस्तक्षेप के बाद सरकार ने इस हलफनामे को वापस ले लिया था । श्री कर्ण सिंह ने हलफनामे पर कड़ा आक्रोश जताते हुए कहा कि देश में क्या पहले ही विवाद कम थे, जो पुरातत्व सर्वेक्षण ने हमारे चारों ओर व्याप्त भ्रांति और तनाव में अपना भी योगदान जोड़ दिया । हलफनामे में रामायण के चरित्रों की ऐतिहासिक प्रामाणिकता नहीं होने की कही गयी बात का जवाब देते हुए डॉ. सिंह ने कहा कि विश्व की अधिकांश महान धार्मिक विभूतियों के ऐतिहासिक साक्ष्यों को खोजना मुश्किल हो जायेगा ।

यह कोई पीएच.डी. के शोध प्रबंध का प्रश्न नहीं है बल्कि ऐसा प्रश्न है जो संसार भर के करोड़ों लोगों के विश्वास और मनोभावों को आक्रांत करता है । उन्होंने कहा कि अयोध्या, रामेश्वरम और धनुषकोडि सहित भारत और श्रीलंका में ऐसे बहुत-से स्थान हैं जो भगवान राम के जीवन के घटनाक्रमों से अंतरंग रूप से संबद्ध हैं । डॉ. सिंह ने हलफनामे के विरुद्ध एक और तर्क देते हुए कहा कि वाल्मीकि की मूल रामायण से लेकर कंबन की तमिल कृति और तुलसीदास के अमर काव्य रामचरितमानस तक विश्व की लगभग सभी भाषाओं में राम-कथा सैकड़ों बार कही और दोहरायी गयी है । राम के जन्म से आरंभ होकर विजयोल्लसित अयोध्या आगमन तक की अत्यंत मनमोहक कथा विश्व भर के असंख्य हिन्दुओं के मनःपटल पर अंकित है तथा उनके लिए उतनी ही सच्ची है जितनी अन्य कोई भी तथाकथित ऐतिहासिक विभूति । उन्होंने कहा कि मात्र श्रीराम ही नहीं सीता, लक्ष्मण और हनुमान सहित रामायण कथा के अनेक पात्र समय की वीथियों के आर-पार जनसाधारण की चेतना में रचे-बसे हैं । विलक्षण बात यह है कि रामायण कथा भारत तक ही सीमित नहीं है, इसकी सुगंध सुदूर दक्षिण और दक्षिण पूर्व एशिया तक फैली हुई है । फिजी, मारीशस, गुयाना और सूरीनाम में रह रहे भारतीय मूल के लोगों के लिए सांस्कृतिक और आध्यात्मिक संबल का एकमात्र स्रोत 'रामचरितमानस' है । राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने जब आदर्श समाज की कल्पना की थी, तब उन्होंने रामराज्य का ही आह्वान किया था । डॉ. सिंह ने कहा कि इन तथ्यों के आलोक में पुरातत्व सर्वेक्षण का हलफनामा न केवल भारत और विश्व के सभी हिन्दुओं के लिए बल्कि उन सभी लोगों के लिए दुर्भाग्यपूर्ण, अनुचित और अपमानजनक है, जो हमारी विलक्षण बहुलवादी सांस्कृतिक विरासत को सँजोये हैं । ❐

अमदावाद के विभिन्न विद्यालयों में चलाये जा रहे 'योग एवं उच्च संस्कार शिक्षा व युवाधन सुरक्षा' अभियान की एक झाँकी तथा आदिलाबाद (आं.प्र.) में आयोजित 'योग शिक्षा कार्यक्रम'।
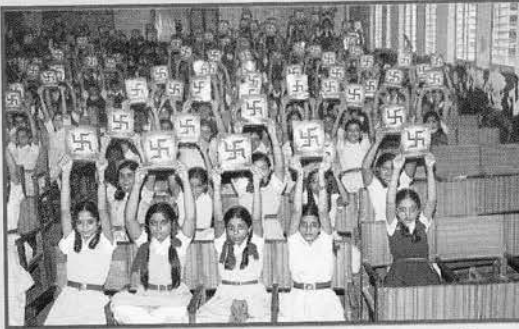
उल्हासनगर जि. थाने (महा.) व कांडगुल जि. बिदर (कर्नाटक) में स्वस्तिक का वितरण।

कन्दरोड़ी जि. कांगड़ा (हि.प्र.) में 'संस्कार सिंचन कार्यक्रम' तथा रूपनारायणपुर जि. वर्धमान (प.बंगाल) के बच्चों में नोटबुकों का निःशुल्क वितरण।

सिल्लोड जि. औरंगाबाद (महा.) में आयोजित बालभोज कार्यक्रम तथा पाथरज जि. रायगड (महा.) की आदिवासी आश्रम शाला में आयोजित 'उज्ज्वल भविष्य निर्माण शिविर'।

वर्ष 2008 के वॉल कैलेंडर, पॉकेट कैलेंडर

1 October 2007
RNP. NO. GAMC 1132/2006-08
WPP LIC NO. GUJ-207/2006-08
RNI NO. 48873/91
DL(C)-01/1130/2006/08
WPP LIC NO.U(C)-232/2006/08
G2/MH/MR-NW-57/2006-08
WPP LIC NO. MH/MR/14/07
'D' NO. MH/MR/TECH-47/4/07

लुधियाना (पंजाब) में आर्द्रा नक्षत्रयुक्त चतुर्दशी के पुनीत अवसर पर ॐकार का जप करते हुए भक्तजन। आश्रम के शिवमंदिर में शिवलिंग पर जल से ही 'ॐ' की आकृति बन गयी जो भक्तों द्वारा सतत जल चढ़ाये जाने पर भी मिटी नहीं।

अमदावाद गुरुकुल के विद्यार्थियों द्वारा गणेश चतुर्थी के दिन मेधाशक्तिवर्धक श्रीगणेश मंत्र से आहुतियाँ देते हुए किया गया सामूहिक हवन तथा द्वारका (दिल्ली) में आयोजित 'आज की शाम पूज्य बापूजी के नाम' भजन संध्या कार्यक्रम। पेटलावद आश्रम, जि. झाबुआ (म.प्र.) में मंदिर के गुंबद पर पूज्य बापूजी की तस्वीर उभर आयी जिसका दर्शन करने प्रतिदिन लोगों की भीड़ आश्रम में एकत्र हो रही है।

Posting at Rishi Prasad PSO between 1st to 14th of E.M. Back issue at PSO-AHD * Posting at ND.PSO on 5th & 6th of E.M. *Posting at MBI Patrika Channel on 9th & 10th of E.M.